संस्थापित १८६७ ई.

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

आजीवन शुल्क ₹ २,५००
वार्षिक शुल्क ₹ २००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) एक प्रति ₹ ५.००

● वर्ष : १२८ ● : अंक ४६ ● ०७ दिसम्बर, २०२३ (गुरुवार) मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष दशमी सम्वत् २०८० ● दयानन्दाब्द १६६ वेद व मानव सृष्टि सम्वत्: १६६०८५३१२४

समाज सुधार एवं सत्य सनातन वैदिक धर्म का प्रचार प्रसार ही आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य

महर्षि के उद्देश्य की पूर्ति के संकल्प के साथ

आर्य महा सम्मेलन बिजनौर का समापन

-देवेन्द्रपाल वर्मा

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की जयन्ती के उपलक्ष्य में जिला आर्य प्रतिनिधि सभा बिजनौर द्वारा आयोजित ''आर्य महासम्मेलन'' में दिनांक ०२ दिसम्बर, २०२३ को मुख्य अतिथि के रूप में सम्बोधित करते हुए आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र.के प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा ने कहा कि महर्षि दयानन्द द्वारा सन् १८७५ ई. में आर्य समाज की स्थापना का मुख्य उद्देश्य समाज में फैले पाखंड व रूढ़ियों आदि को समाप्त कर, सत्य सनातन वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार था। पराधीन भारत माँ की बेड़ियों को काटने के लिए लाखों रण बाँकुरों ने हँसते-हँसते अपने प्राणों को न्यौछावर कर दिया। इन बलिदानियों के जत्थों को तैयार करने से लेकर देश स्वतंत्र कराने तक, आर्य समाज ने जी-जान लगा दिया। देश में सामाजिक बुराइयाँ, जाति-पांति, छुआ-छूत, अशिक्षा गरीबी आदि अपने चरम पर थी, तब एक 'देवदूत' के रूप में महर्षि दयानन्द सरस्वती का आगमन हुआ। स्वराज्य शब्द के प्रथम उद्घोषक महर्षि ही थे। स्त्री शिक्षा, स्वावलंबन व सँस्कार के लिए हम सदैव उनके ऋणी रहेंगे।

आज कल कुछ अज्ञानी लोग स्त्रियों के लिए गायत्री मंत्र वर्जित करते हैं, जो मूर्खता की पराकाष्ठा है। भारत जब ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में अपने झंडे

गाड़ रहा है तो धर्म के ठेकेदार अपनी बेसुरी तान छेड़ कर मूर्खता प्रकट कर रहे हैं। वेदों में कहीं भी स्त्रियों को पढ़ने से नहीं रोका गया। एक स्त्री के शिक्षित होने से पूरा परिवार शिक्षित व सँस्कारित हो जाता है। अपनी संतानों को एक माता ही सँस्कारित कर सकती है।

विश्व में सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद है। वैदिक ज्ञान ही सनातन धर्म है जिसके कारण भारत विश्व गुरू था और पुनः इस ओर अग्रसर है। सारे संसार को ज्ञान देने का कार्य भारत भूमि से ही हुआ। हमारे ऋषि मंत्र दृष्टा व महान अन्वेषक थे जिन्होंने सम्पूर्ण विश्व को आध्यात्म व ब्रह्म ज्ञान से आलोकित किया। पुनः संसार का सिरमौर बनने के लिए हमें वेदों की शरण में ही आना पड़ेगा।

समारोह को विशिष्ट अतिथि श्री रवि धारीवाल, पूर्व ब्लाक प्रमुख ने भी सम्बोधित किया। इससे पूर्व सर्वश्रीमती मीरा रानी जी, ब्रजेश्वरी देवी जी, प्रधानाचार्या क्रमशः आर्य वैदिक कन्या इंटर कालेज व बाल विद्या मंदिर, बिजनौर, छवि आर्या जी, सुषमा शर्मा जी, को प्रतीक चिन्ह देकर तथा महाशय तेजपाल आर्य, सर्वश्री राजवीर सिंह, जय प्रकाश, बृजपाल शर्मा, देवेन्द्र सत्यार्थी आदि को शाल उढ़ाकर सम्मानित किया गया।

कार्यक्रम में स्वामी सूर्यवेश जी, आचार्य हरि प्रकाश शास्त्री, कुमारी छवि आर्या आदि विद्वत्गण तथा श्री माँगेराम चौहान न्यायिक मजिस्ट्रेट, डॉ. दीपेन्द्र सिंह आदि गणमान्य लोगों सहित सर्व श्री रावेन्द्र आर्य जी प्रधान, श्री कुलदीप आर्य जी, मंत्री, श्री दलजीत सिंह जी-कोषाध्यक्ष, श्री बृजेन्द्र सिंह आर्य उप मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र., श्री ब्रह्मपाल सिंह, भानुप्रताप सिंह, मास्टर गिरिराज सिंह, अशोक कुमार, अमन सिंह, सुरेन्द्र सिंह आर्य, बाबू टेक चन्द्र, योगेश कुमार, जितेन्द्र, डॉ. विनीत कुमार, पवन चौधरी आदि की गौरवपूर्ण उपस्थिति रही। अन्त में सभी ने महर्षि दयानन्द के उद्देश्यों की पूर्ति का संकल्प लिया।

वेदामृतम्

इयं मे नाभिरिह मे सधस्थम्, इसे मे देवा अयमस्मि सर्वः।
द्विजा अह प्रथमजा ऋतस्य, इदं धेनुरदुज्जायमाना।।

ऋ० १०.६१.१९

मैं आज अपनी स्थिति को और चारों ओर के वातावरण को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। यह पृथिवी मेरी माता है, यह मेरी नाभि है, नाभि के समान मुझ शिशु को अपने से बांधनेवाली है। यह माता मुझे क्या नहीं देती ? मुझे अन्न, फल, रस, औषधि, रजत, हिरण्य, हीरे, मोती, सब-कुछ देकर मेरा पालन करती है। इसमें मेरा 'सधस्थ' है, मेरा स्थिति-स्थान है, मेरी गोद है। इसी की गोद में हम पले हैं, खेले-कूदे हैं, बढ़े हैं। इसी की गोद में हमने घर बसाये हैं। ये जो चारों ओर 'देव' दिखाई दे रहे हैं, ये सब मेरे हैं। ये सूर्य, चन्द्र, तारे, विद्युत, अग्नि, पर्जन्य, समुद्र, पर्वत, नदी, सरोवर, सब मेरे हैं, समाज के ये व्रतनिष्ठ तपस्वी गुरुजन, उपदेशक, साधु, संन्यासी आदि विद्वद्-देव सब मेरे हैं, सब मेरी सहायता के लिए तत्पर हैं। मैं 'सर्व' हूँ, सबका केन्द्र-विन्दु हूँ, सर्वोपरि हूँ, सर्व- शक्ति का भण्डार हूँ, सर्वरूप हूँ, सर्वमय हूँ। मेरे अन्दर सब देव स्थित हैं, वायु-देव प्राण होकर नासिका में प्रविष्ट हैं, अग्नि-देव वाणी बनकर मुख में प्रविष्ट हैं, सूर्य देव चक्षु बनकर नेत्रों में प्रविष्ट हैं, दिशाएँ श्रवण-शक्ति होकर कानों में प्रविष्ट है, ओषधि- वनस्पतियाँ लोम होकर त्वचा में प्रविष्ट है, चन्द्रमा मन होकर हृदय में प्रविष्ट है। द्विजगण सत्यज्ञान के श्रेष्ठ प्रचारक हो रहे हैं। उन्होंने विद्यारूपिणी कामधेनु को उत्पन्न किया है, जो सहस्र धाराओं में ज्ञानरस-रूप दूध को दे रही है। इस कामधेनु के अमृत- तुल्य पय का पान कर सब पृथिवी माता के पुत्र ज्ञानी और कर्तव्य-पालक हो गये हैं।

हे पृथिवी-मातः ! हे विश्वेदेवाः ! हे द्विजगण ! हे कामधेनु ! तुम सब सदा मुझे अपने लाभों को प्रदान करते रहो।

साभार-वेदमंजरी

राष्ट्रीय शराबबंदी संयुक्त मोर्चा के तत्वावधान में दिल्ली जंतर-मंतर पर शराबबंदी सत्याग्रह

राष्ट्रीय शराब बंदी संयुक्त मोर्चा के तत्वावधान में आगामी ३० जनवरी, २०२४ ''बापू जी के बलिदान दिवस'' पर दिल्ली जंतर-मंतर पर आयोजित शराब बंदी सत्याग्रह को सफल बनाने के लिए देश में शराब बन्दी जन जागरण अभियान जारी है।

इसी कड़ी में इन्दिरा नगर (इंसाफनगर) स्थित शराब बंदी मोर्चा के कार्यालय पर आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा की अध्यक्षता में दिनांक ३० नवम्बर, २०२३ को एक बैठक सम्पन्न हुई। बैठक में उपस्थित पदाधिकारियों ने शराब बंदी, सत्याग्रह को सफल बनाने पर चर्चा की और उ.प्र. से बड़ी संख्या में सत्याग्रहियों को ले जाने पर गहन विचार-विमर्श किया गया।

बैठक में उपस्थित शराबबंदी संयुक्त मोर्चा के राष्ट्रीय संयोजक श्री सुल्तान सिंह ने कहा कि शराब बंदी संयुक्त मोर्या के घटक, आर्य समाज शराब बंदी संघर्ष समिति, राष्ट्रीय लोक समिति, पी.पी.आई. नेशनल यूथ पार्टी आदि संगठनों द्वारा विगत पाँच वर्षों से लगातार शराब बंदी के लिए संघर्ष जारी है। जबतक भारत सरकार द्वारा मोरार जी भाई सरकार की तर्जपर कानून बना कर देश भर में चल रहे शराब के ठेके नहीं हटायेगी। मोर्चा के पदाधिकारी चुप नहीं बैठेंगे। बैठक में उपस्थित आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा, नेशनल यूथ पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष राजकुमार सिंह, उत्तर प्रदेश शराबबंदी मोर्चा के संयोजक श्री मुर्तजा अली आदि ने सत्याग्रह में सैकड़ों सत्याग्रहियों के साथ ३० जनवरी, २०२४ को जंतर-मंतर पर पहुंचने का संकल्प लिया। बैठक में सर्वश्री डॉ. आर.पी. कुरील, पी.सी.कुरील, गिरजेश पाण्डेय, संजीव श्रीवास्तव, मिर्जा इशरत बाग, श्रीमती हलीमा अज़ीम, शाहिद सिद्दीकी, खुर्शीद सिद्दीकी, फहद हसन आदि उपस्थित थे।

देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान/संरक्षक

पंकज जायसवाल
मंत्री/सम्पादक

आर्य शिवशंकर वैश्य
प्रबन्ध सम्पादक

सम्पादकीय.....

ईश्वर भक्ति एवं मोक्ष

अनेक लोग ऐसा कहते हैं, ''दूसरों की सेवा करना, परोपकार करना, यही ईश्वर भक्ति है.'' कुछ लोग कहते हैं, ''ईमानदारी से व्यापार व्यवहार करना, अपने कर्म पर पूरा ध्यान रखना, यही ईश्वर भक्ति है'' कुछ लोग कहते हैं, ''दूसरों को दुख न देना, किसी को ठगना नहीं, यही ईश्वर भक्ति है.'' निस्संदेह यह सभी ईश्वर भक्ति है। परंतु यह सब अधूरी भक्ति है।''

वेदो में कहा है, कि ईश्वर भक्ति के तीन भाग हैं। ''एक -- दूसरे के साथ न्याय से व्यवहार करना, सच्चाई और ईमानदारी से जीना। किसी को दुख न देना आदि।'' ''दूसरा -- वेदों का अध्ययन करके अपने ज्ञान को शुद्ध करना। प्रत्येक व्यक्ति में बहुत सी अविद्या होती है। वेद आदि शास्त्रों के अध्ययन से ही वह दूर हो सकती है, अन्य प्रकार से नहीं। इसलिए ईश्वर भक्ति का यह दूसरा भाग है।'' ''और तीसरा भाग -- ईश्वर की उपासना करना, मेडिटेशन करना।'' इन तीनों को मिलाकर ईश्वर की भक्ति पूरी कहलाती है।

''इन तीनों के करने से जब व्यक्ति का स्तर बहुत ऊंचा उठ जाता है, तब उसकी अविद्या के साथ-साथ उसके अन्य दोष भी नष्ट हो जाते हैं। जैसे कि काम क्रोध लोभ राग द्वेष ईर्ष्या अभिमान इत्यादि।'' ''ये सारे दोष नष्ट होने पर ही व्यक्ति का मोक्ष होता है। तभी उसके सारे दुख दूर होते हैं, उसका पुनर्जन्म रुक जाता है, और वह मुक्ति में ईश्वर के साथ संबद्ध होकर अरबों खरबों वर्षों तक दिव्य आनंद का अनुभव करता है। अतः अधूरी भक्ति को पूरी भक्ति न समझें, बल्कि वेदों के अनुसार अपने ज्ञान, कर्म और उपासना, इन तीनों को शुद्ध करके पूरी भक्ति करें, जिससे आपका यह जीवन भी सफल हो सके, तथा आपको मोक्ष प्राप्ति भी हो सके।''

मोक्षप्राप्ति के लिए मनुष्य को विद्या एवं अविद्या को जानना भी आवश्यक है। इस सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के नवें समुल्लास में यजुर्वेद अ.४० के मंत्र १४ का उल्लेख करते हुए लिखते हैं-

विद्या चाविद्यां च यस्तद्वेदोभय सह।
अविद्यया मृत्यं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।।

अर्थात् जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप के साथ ही साथ जानता है वह अविद्या अर्थात् कर्मोपासना से मृत्यु को तर के विद्या अर्थात् यथार्थ ज्ञान से मोक्ष को प्राप्त होता है।

जो अनित्य संसार और देहादि में नित्य अर्थात् जो कार्य जगत देखा, सुना जाता है सदा रहेगा, सदा से है और योग बल से यही देवों का शरीर सदा रहता है वैसी विपरीत बुद्धि होना, अविद्या का पहला भाग है।

अशुचि अर्थात् मलमय शरीर का आकर्षण, मिथ्या भाषण, चोरी आदि अपवित्र में पवित्र बुद्धि, यह दूसरा भाग है अत्यन्त विषय सेवन रूप दुःख में सुख बुद्धि आदि तीसरा कारण है। अनात्मा में आत्मबुद्धि करना यह अविद्या का चौथा भाग है। ये चार प्रकार का विपरीत ज्ञान अविद्या कहा जाता है। इसके विपरीत ज्ञान को विद्या अर्थात् अनित्य को अनित्य, आत्मा में आत्मा अनात्मा में अनात्मा आदि को जानना विद्या है।

जो मनुष्य एक क्षण के लिए भी कर्म, उपासना और ज्ञान से रहित नहीं होता तथा धर्मयुक्त, सत्य भाषण आदि कर्म करना, मिथ्या भाषण आदि अधर्म को छोड़ देता है, वह मोक्ष को प्राप्त करता है।

मुक्त जीव मुक्ति में प्राप्त होकर ब्रह्म में आनन्द को तब तक भोग कर पुनःमहाकल्प के पश्चात् मुक्ति सुख को छोड़ कर इस संसार में आते हैं।

अतः हम सभी को अविद्या को छोड़ कर विद्या प्राप्त करने के लिए प्रयास करना चाहिए जो इस जन्म-मृत्यु से मुक्ति प्राप्त करने में सहाय होगा।

सम्पादक

गतांक से आगे.....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ त्रयोदश समुल्लास

अथ कृश्चीनमत विषयं व्याख्यास्यामः

जबूर का दूसरा भाग

काल के समाचार की पहली पुस्तक

योहन रचित सुसमाचार

(समीक्षक) क्या जब वह शैतान स्वर्ग में था तब लोगों को नहीं भरमाता था ? और उसको जन्म भर बन्दीगृह में घिरा अथवा मार क्यों न डाला? उसको पृथिवी पर क्यों डाल दिया? जो सब संसार का भरमाने वाला शैतान है तो शैतान को भरमाने वाला कौन है? यदि शैतान स्वयं भर्मा है तो शैतान के विना भरमनेहारे भर्मेगे और जो भरमानेहारा परमेश्वर है तो वह ईश्वर ही नहीं ठहरा। विदित तो यह होता है कि ईसाइयों का ईश्वर भी शैतान से डरता होगा क्योंकि जो शैतान से प्रबल है तो ईश्वर ने उसको अपराध करते समय ही दण्ड क्यों न दिया ? जगत् में शैतान का जितना राज है उसके सामने सहस्त्रांश भी ईसाइयों के ईश्वर का राज नहीं। इसीलिये ईसाइयों का ईश्वर उसे हटा नहीं सकता होगा। इससे यह सिद्ध हुआ कि जैसा इस समय के राज्याधिकारी ईसाई डाकू चोर आदि को शीघ्र दण्ड देते हैं वैसा भी ईसाइयों का ईश्वर नहीं। पुनः कौन ऐसा निर्बुद्धि मनुष्य है जो वैदिक मत को छोड़ पोकल ईसाई मत स्वीकार करे ? ।।११८।।

११९ - हाय पृथिवी और समुद्र के निवासियो। क्योंकि शैतान तुम पास उत्तर -है।

यो० प्र० प० १२। आ० १२।।

(समीक्षक) क्या वह ईश्वर वहीं का रक्षक और स्वामी है? पृथिवी के मनुष्यादि प्राणियों का रक्षक और स्वामी नहीं है? यदि भूमि का भी राजा है तो शैतान को क्यों न मार सका? ईश्वर देखता रहता है और शैतान बहकाता फिरता है तो भी उसको वर्जता नहीं।। विदित तो यह होता है कि एक अच्छा ईश्वर और एक समर्थ दुष्ट दूसरा ईश्वर हो रहा है।।११९।।

१२०-और बयालीस मास लों युद्ध करने का अधिकार उसे दिया गया।। और उसने ईश्वर के विरुद्ध निन्दा करने को अपना मुंह खोला कि उसके नाम की और उसके तम्बू की और स्वर्ग में वास करनेहारों को निन्दा करे। और उसको यह दिया गया कि पवित्र लोगों से युद्ध करे और उन पर जय करे और हर एक कुल और भाषा और देश पर उसको अधिकार दिया गया।।

-यो० प्र० ५० १३। ० ५। ६। ७४

(समीक्षक) भला ! जो पृथिवी के लोगों को बहकाने के लिये शैतान और पशु आदि को भेजे और पवित्र मनुष्यों से युद्ध करावे वह काम डाकुओं के सरदार के समान है वा नहीं। ऐसा काम ईश्वर वा ईश्वर के भक्तों का नहीं हो सकता ।।१२०।।

क्रमशः अगले अंक में...

दयानन्द शास्त्रार्थ प्रश्नोत्तर-संग्रह

क्या मुसलमान दासीपुत्र हैं

(काजी जो रायपुर से प्रश्नोत्तर-२८ अगस्त, १८८१)

१९ अगस्त, सन् १८८१, शुक्रवार दिन के आठ बजे स्वामी जी रायपुर पधारे और नगर के बाहर पहुंच कर माधोदास की वाटिका में जिसके द्वार पर एक महल है और स्वामी के उतारने के लिए साफ कराया गया था, आनकर ठहरे। उस समय बूंदाबादी हो रही थी ।

स्वामी जी के पधारने की सूचना जब ठाकुर हरिसिंह जी को हुई तब वे अपने बन्धुजन और दर्बारियों समेत दर्शन करने के लिए आये। एक अशफा और पाँच रुपया भेंट कर हाथ जोड़ खड़े रहे। स्वामी जी ने पूछा कि आप प्रसन्न तो हैं? उत्तर दिया कि हाँ आज आपके दर्शन से प्रसन्न हूँ। फिर सब यथायोग्य बैठ गए ।

फिर स्वामी जी ने प्रश्न किया कि आपके यहाँ राजमन्त्री कौन हैं? ठाकुर साहब ने उत्तर दिया कि शेख इलाहीबख्श हैं परन्तु वे जोधपुर गये है, उनके भतीजे करीमवख्श जी उनके पीछे सारे काम का प्रबन्ध करते हैं और बतलाया कि वे बैठे हैं। तब महाराज ने कहा कि ''आपके यहाँ मुसलमान मंत्री हैं, ओहो, ये तो दासीपुत्र हैं। आर्य पुरुषों को उचित है कि यवनों को अपना राजमंत्री न बनावें।'' ऐसा कहने से करीमबख्श और ५-७ मुसलमान जो वहाँ उपस्थित थे, क्रोध में आकर गुड़गुड़ाने लगे और ठाकुर साहब भी स्वामी जी से आज्ञा लेकर अपने राजमहलों में चले गये। और मुसलमानों ने शेख जी की हवेली में इकट्ठे होकर यह विचार किया कि उन्होंने हम को दासी का पुत्र बताया। इसलिये उनसे फौजदारी (लड़ाई) करनी चाहिए। जिस पर किसी ने कुछ कहा और किसी ने कुछ किन्तु एक चमनू खाँ मुसलमान ने कहा कि मेरी बात मानो और पहले कुछ न करो। पाँच सात दिन पश्चात् जब रमजान की ईद पर काजी जी आवेंगे तो उनको ले जाकर स्वामी जी से प्रश्नोत्तर करायेंगे । यदि झूठे होंगे तो फिर ऐसा ही करेंगे। यह बात सब ने स्वीकार की।

२७ अगस्त, सन् १८८१ को ईदउल फितर पर काजी जी आये और २८ अगस्त, सन् १८८१, रविवार तदनुसार भादों सुदि ४ को जब प्रातःकाल स्वामी जी आठ बजे के समय बाहर से घूमकर आये तो यवनों का झुण्ड अपने मकान की ओर आते देखा। स्वामी जी ने मुझको पुकारा कि कोठारी जी ! ऊपर आओ। मैं ऊपर गया, कहने लगे कि देखो कदाचित् यवनों का समूह आता है। मैंने नीचे आनकर मुसलमानों को आते देखा। उनको नीचे ठहराकर स्वामी जी से जाकर कहा कि यहाँ आते हैं। महाराज दुग्धपान करके कुर्सी बिछवा कर स्वयं बैठ गये और उनको बुलवाया और फर्श पर बिठा दिया। आते ही काजी जी ने प्रश्न किया-

आप हम को दासीपुत्र कैसे बतलाते हो ?

स्वामी जी-अपने कुरान शरीफ को देखो। इसराईल जिसको इब्राहीम कहते हो उसकी दो पत्नियाँ थीं-एक ब्याही हुई ''सारा'', दूसरी दासी ''हाजरा'' । जिसको उसने घर में डाला हुआ था। ब्याही हुई केवल सारा थी । अब देखिये कि सारा से अंग्रेज लोग और हाजरा से तुम लोग उत्पन्न हुए, फिर दासी पुत्र होने में क्या सन्देह है ?

काजी जी-कुरान में ऐसा नहीं लिखा ।

स्वामी जी ने रामानन्द ब्रह्मचारी को कहा कि कुरान का पुस्तक लाओ । पुस्तक लाकर काजी जी को दिखलाया (कुरआन सूरसे अन्कबूत-उसी वर्ष में इसमाईल को हाजरा ने उत्पन्न किया जो सारा खातून की दासी थी। खंड २, पृष्ठ १६७)।

काजी जी-वह दासी तो थी परन्तु निकाह (विवाह) कर लिया था। स्वामी जी-फिर भी वास्तव में दासी ही है तो फिर आपके दासी पुत्र होने में क्या सन्देह है।

इस पर काजी जी निरुत्तर हो गए। मुसलमान सब देखते के देखते रह गए।

तब कुरान को स्वामी जी ने हाथ से पृथ्वी पर रख दिया ।

काजी जी ने कहा-आपने यह क्या किया कि कुरान को पाँव में रख दिया।

स्वामी जी-काजी साहब! तनिक विचार करो क्या काजी नाम ही के कहलाते हो, कागज और स्याही कैसे बनती है और छापाखाने पर किसपर कागज छपते हैं, और कलम (लेखनी) क्या चीज है और कहाँ उत्पन्न होती है। इस पर निरुत्तर होकर काजी जी उठ खड़े हुए और उनके साथी सब यवन शान्त होकर चले गये। (लेखराम पृष्ठ ५४७ से ५४८)

नदियाँ-नाले, बहुत जगत में,
गंगा जैसा पानी ना।
दानी जग में बहुत हुए हैं,
भामाशाह सा दानी ना।।
मत मतान्तर बहुत जगत में,
वेदों जैसी वाणी ना।
ज्ञानी-ध्यानी बहुत हुए हैं,
दयानन्द सा ज्ञानी ना।।

प्यारे सज्जनो। पौराणिक लोग शंकर (शिव जी) की कला- कृति बनाकर उसकी पूजा का ढोंग करते हैं। उस कलाकृति जो एक मनुष्य की शक्ल की होती है। उसके सिर से गंगा बहती हुई दिखाते हैं, माथे पर चन्द्रमा बना हुआ दर्शाते हैं, उस कलाकृति के गले में साँपों की माला लिपटी हुई दिखाते हैं तथा उसके पूरे शरीर पर भस्म (मिट्टी) लगी हुई दर्शाते हैं। मैंने एक पौराणिक विद्वान से पूछा कि यह किस व्यक्ति की कलाकृति है तो वह तपाक से बोला- श्रीमान जी यह संसार का संहार करने वाले परमात्मा शिव की मूर्ति है। मैंने उससे दोबारा पूछा कि इसके सिर से गंगा बहती हुई क्यों दिखाई गई है। माथे पर चन्द्रमा क्यों बनाया गया है, तथा इसके शरीर पर मिट्टी क्यों लगाई गई है। और गले में साँप क्यों लिपटे हुए है? बह व्यक्ति बोला - श्रीमान जी, मुझे इसका ज्ञान नहीं हैं।

उसकी बात सुनकर मैंने उसे समझाया कि यह एक सच्चे साधु का चित्र है। इसे ठीक तरह समझने का यत्न करो। एक साधु के मस्तिष्क से वेद (ज्ञान) की गंगा बहनी चाहिए, उसके हृदय में दयाभाव होना चाहिए अर्थात वह शीलवन्त होना चाहिए। साधु विश्व का कल्याण अर्थात अपने विरोधियों की भलाई करने वाला होना चाहिए तथा वह आरामतलबी अर्थात् प्रमादि नहीं होना चाहिए। जो घूम-घूम कर संसार को वेद ज्ञान कराए वही सच्चा साधु है इस युग में महर्षि दयानन्द सरस्वती वास्तव में ऐसे ही त्यागी - तपस्वी वैदिक विद्वान परोपकारी ईश्वर भक्त थे। भारत वर्ष १९वीं शताब्दी नवजागरण का काल है। नवजागरण के आदि पुरुष राजा राम मोहन राय थे। उन्होंने अपने मिशन की पूर्ति के लिए ब्रह्म समाज की स्थापना की थी। राजा राम मोहन राय अंग्रेजों के राज्य और अंग्रेजी भाषा को भारत वर्ष के लिए ईश्वर का वरदान मानते थे। वे वास्तव में अंग्रेजों के पक्के भक्त थे। अतः राजा राम मोहन राय समाज सुधार के कार्य में तो लगे किन्तु

भारत के पितामह-महर्षि दयानन्द सरस्वती

-पंडित नन्दलाल निर्भय

सवराज का चिंतन उनके लिए कुछ विशेष महत्त्व न रखता था।

स्वामी दयानन्द का कार्यकाल राजा राम मोहन राय से लगभग ५० वर्ष पीछे है। स्वामी दयानन्द का जन्म १८२४-२५ में हुआ था और १८५७ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के वे प्रत्यक्ष दर्शी थे। बहुत सारे इतिहासकारों का मत है कि स्वामी दयानन्द ने सन्यासी के रुप में उस समय प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लिया था। उनके ग्रन्थों में भी ऐसे अन्तः प्रमाण उपस्थित है। जो उनके सक्रिय भाग लेने का समर्थन करते हैं।

१८५७ का स्वतन्त्रता संग्राम असफल हो चुका था। और अंग्रेजों का प्रभुत्व सारे, भारत देश पर स्थापित हो चुका था। महारानी विक्टोरिया ने ईस्ट इंडिया कम्पनी से शासन ले लिया था। और भारतवर्ष का शासन सीधे तौर पर बरतानियाँ सरकार के हाथों में चला गया था। महारानी विक्टोरिया ने भारत के लिए प्रसिद्ध घोषणा-पत्र प्रसारित कर दिया था। जिसके अनुसार अंग्रेज सरकार भारतवर्ष की प्रजा के साथ पूर्ण न्याय करेगी। किसी के साथ धार्मिक दृष्टि से कोई पक्षपात नहीं होगा। और अंग्रेज सरकार भारतवर्ष की सुख-सुविधा का ध्यान रखेगी। स्वामी दयानन्द ने अपने युग निर्माता क्रान्तिकारी ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' में महारानी विक्टोरिया की इस घोषणा का साफ उत्तर दिया है-

"अब अभाग्योदय से आर्यवर्त में आर्यों का अखण्ड-स्वतन्त्र स्वाधीन निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों को पादाक्रान्त हो रहा है। राज कोई कितना ही करे। परन्तु जो स्वदेशी राज होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराए का पक्षपात शून्य प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है, परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा, प्रथक- पृथक शिक्षा अलग व्यबहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है।"

जहाँ स्वामी दयानन्द ने अपने लेखों - व्याख्यानों में प्रार्थना की पुस्तकों में सर्वत्र स्वतन्त्र-स्वराज्य के लिए प्रार्थना की है, वहीं' ब्रह्म समाज के नेताओं की अंग्रेजी राज्य के प्रति भक्ति प्रशंसा स्वामी दयानन्द के विचारों के अनुकूल नहीं' थी और वे खुलकर इस सम्बन्ध में उनकी आलोचना करते थे। केशवचन्द्र सैन बह्म-समान के प्रसिद्ध नेता थे और वे ईसाईयों से और ईसाई सम्प्रदाय से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने अपना पूजा स्थान मन्दिर में न बनवाकर गिरिजाघर बनवाया था। स्वामी दयानन्द यह सबकुछ विदेशी राज्य और उसकी भक्ति का फल मानते थे। उन्होंने ब्रह्म समाज की आलोचना में लिखा है- "इन लोगों में स्वदेश भक्ति बहुत न्यून है। ईसाईयों के बहुत से आचरण ले लिए है। खान-पान विवाह आदि के नियम भी बदल दिए हैं। अपने देश की प्रशंसा और पूर्वजों की बड़ाई करनी तो दूर रही, उसके स्थान में भर-पेट निन्दा करते हैं। स्वामी दयानन्द भारतवर्ष के लिए देश भक्ति और अपने इतिहास तथा महापुरुषों की प्रतिष्ठा को बहुत महत्व देते थे। स्वदेश भक्ति का एक प्रखर -प्रमाण 'सत्यार्थ प्रकाश' के निम्न उद्धरण में मिलता है। - "भला जब आर्यवर्त में उत्पन्न हुए है, इसी देश का अन्न-जल, खाया - पिया अब भी खाते-पीते हैं। तब अपने माता-पिता - पिता-महादि के मार्ग को छोड़कर दूसरे विदेशी मतों पर अधिक झुक जाना ब्रह्म समाजी और प्रार्थना समाजियों का एतद् देश की संस्कृत विद्या से रहित अपने को विद्वान प्रकाशित करना इंग्लिश भाषा पढ़ के पण्डिताभिमानी होकर झटिति एकमत चलाने में प्रवृत्त होना मनुष्यों का बुद्धि कारक काम क्योंकर हो सकता है?

स्वामी दयानन्द ने अंग्रेजों की उपनिवेशवादी नीतियों का भी खुलकर विरोध किया है। यहाँ तक अंग्रेज लेखकों ने उन्हें बागी-फकीर और विद्रोही संन्यासी की उपाधि दे डाली थी। पीछे उनकी पुस्तकों पर इलाहाबाद में जस्टिस हैरिंगटन की अदालत में अभियोग भी चला था। उन्होंने अंग्रेजों द्वारा भारतीय जनता पर लगाए गए नमक कर, जंगली उत्पाद पर चुंगी और सरकारी कागजों को मूल्य स्टैम्प ड्यूटी का जम कर विरोध किया है। और यह सब सन् १८७५ ई. का काम है। महात्मा गाँधी ने नमक कर का विरोध १९३० ई. में किया था। और स्वामी दयानन्द ने मोहन दास गांधी से ५५ वर्ष पूर्व नमक कर के विरुद्ध आवाज उठाई थी। वे लिखते है- "एक तो यह बात है कि जो नोन (नमक) और पोनरोटी (चुंगी) में जो कर लिया जाता है वह मुझको अच्छा नही मालूम देता क्यों कि नोन के बिना दरिद्र का भी निर्वाह नहीं होता। किन्तु सबको नोन की आवश्यकता होती है। वे मजदूरी मेहनत से जैसे-तैसे निर्वाह करते हैं। उनके ऊपर भी यह नौन का कर दण्ड तुल्य है पौन रोटी चुंगी से भी गरीब लोगों को बहुत क्लेश होगा। क्योंकि गरीब कहीं से घास छेदन करके ले आये व लकड़ी का भार ले आये। उनके ऊपर कौडियों के लगाने से उनको अवश्य क्लेश होगा। इससे पौनरोटी (चुंगी) का जो स्थापना करना, तो भी हमारी समझ से अच्छा नहीं" " वे आगे स्टैम्प ड्यूटी का विरोध करते हुए लिखते हैं- "सरकार कागद (स्टैंप) को बेचती है। और बहुत सा कागजों पर धन बढ़ा दिया है। इससे गरीब लोगों बहुत क्लेस पहुंचता है सो यह बात राजा को करनी उचित नहीं है। कचहरी में बिना धन के कुछ बात होती नहीं। इससे जो कागजों के ऊपर धन लगाना है सो भी मुझको अच्छा मालूम नहीं देता। इन्हीं सब बातों को देखकर भारतीय संसद के प्रथम अध्यक्ष श्री अनंत शयन्य अयंगर ने स्वामी दयानन्द को राष्ट्रपितामह की उपाधि दी थी। श्री आयंगर जी कहते है- "गाँधी जी अगर राष्ट्र के पिता थे तो महार्षि दयानन्द सरस्वती राष्ट्र के पितामह थे। महर्षि जी हमारी राष्ट्रीय प्रवृति और स्वाधीनता आन्दोलन के आद्य प्रवर्तक थे। गाँधी जी कुछ बातों में उन्हीं के पद चिन्हों पर चले। यदि महर्षि दयानन्द हमें मार्ग न दिखाते तो अंग्रेजी शासन में उस समय सारा पंजाब मुसलमान हो जाता और सारा बंगाल ईसाई हो जाता।

सरदार बल्लभ भाई पटेल की दृष्टि में स्वामी दयानन्द स्वराज्य के प्रथम उद्गाता थे। वे कहते है-"बहुत से लोग महर्षि दयानन्द को सामाजिक और धार्मिक सुधारक कहते हैं परन्तु मेरी दृष्टि में वे सच्चे राजनेता थे जिन्होंने सारे देश में एक भाषा, खादी, स्वदेश प्रचार, पंचायतों की स्थापना, दलितोद्धार, राष्ट्रीय और सामाजिक एकता, प्रचन्ड देशाभिमान और स्वराज की घोषण यह सब बहुत पहले सर्व प्रथम देश को दिया था।" स्वामी, दयानन्द यह समझते थे कि देश का उद्धार स्वराज्य से ही होगा और साथ ही कृषि और उद्योग की उन्नति के लिए वे बहुत प्रयन्शील थे। इनका मानना था कि कृषि की उन्नति और पशुओं की रक्षा किए बिना सम्भव नहीं है। इसीलिए उन्होंने " गोकृष्णादि रक्षिणी" सभा का प्रस्ताव ही नही किया। अपितु उसके लिए प्रयत्नशील भी रहे। अंग्रेजों की नीति भारत के परम्परागत उद्योगों को मिटाने की थी। अंग्रेजी उत्पाद को बढ़ाने के लिए वे भारत के के कारीगरों बुनकरों आदि को बहुत कष्ट देते थे। स्वामी दयानन्द ने स्वदेशी का आन्दोलन तो चलाया ही साथ ही भारतीय युवकों को उद्योग-धन्धों की शिक्षा पाने के लिए जर्मनी के एक प्रिंसिपल वाइज के साथ पत्राचार कर उन्हें भेजने की व्यवस्था की। इस प्रकार कांग्रेस से ५० वर्ष पूर्व ही स्वामी दयानन्द ने स्वराज्य और स्वदेशी के लिए सक्रिय एवं प्रचंड प्रयास किया था।

वस्तुतः स्वामी दयानन्द महाराज के शुभ कार्यों एवं संघर्ष के कारण ही लाला लाजपत राय, स्वामी श्रद्धानन्द, बाल गंगाधर तिलक, विपिन चन्द्र पाल, गोपाल कृष्ण गोखले, सरदार अर्जुन सिंह जैसे महान नेता तथा रामप्रसाद बिस्मिल, मदनलाल धींगरा, बीर उधम सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, खुदीराम बोस, करतार सिंह सराबा, राजगुरु, सुखदेव, भगत सिंह जैसे क्रान्तिकारियों का निर्माण हुआ था। जिन्होंने अंग्रेजी राज की जड़ों को हिला दिया था। और आज हम स्वतंत्र भारत में सुख की सांस ले रहे हैं। इसलिए हम सब को महर्षि दयानन्द महाराज के बताए वेद मार्ग पर चलकर भारत को संसार का सम्राट बनाना चाहिए। इसलिए भारत के नवयुवकों और युवतियों से मेरा निवेदन है-

भारत माँ के पुत्र - पुत्रियो !, वेद. मार्ग अपनाओ तुम।
जगतगुरु ऋषि दयानन्द के, मिलकर के गुण गाओ तुम।।
प्यारा भारत देश हमारा, इसकी सेवा किया करौ।
देवों की धरती भारत, इसकी खातिर जिया करो।।
देश भक्त ईमानदार बन, बढ़-चढ़कर के काम करो।
लेखराम, गुरुदत्त बनो तुम, सारे जग में नाम करो।।

चलमाष-९८१३८४५७७४,
९०५३२५२६८२

वेदों में विज्ञान के मूल सिद्धान्त

परीक्षित मंडल 'प्रेमी'

वेदों का ऐतिहासिक काल अत्यन्त भूत में विलीन है। इतिहास की नजर से छान-बीन करें तो आधुनिक विज्ञान के तमाम उपकरणों के सहारे भी बेचारा इतिहास वेदों की प्राचीनता का भेद जानने में असमर्थ रहा है। आज संसार में वेदों से पुराना कोई साहित्य उपलब्ध नहीं है। भगीरथ प्रयत्न और दीर्घकालीन अन्वेषणों द्वारा भी अबतक वेदों से प्राचीनतम् कोई और रचना उपलब्ध नहीं हो सकी है। चित्रलेख, गुहालेख, शिलालेख, ताम्रपत्र और स्तंभलेख इससे अर्वाचीन ही हैं। उन्हें इससे प्राचीन मानने की प्रवृत्ति अनेकशः दिखाई पड़ती है, किन्तु वह ऐतिहासिक, पुरातात्विक भाषा वैज्ञानिक तथा आधुनिक डेंड्रोक्रोनोलॉजी की दृष्टि से मान्य नहीं है। यूरोप के संस्कृतज्ञों में अपने समय के प्रसिद्ध विद्वान प्रो० मैक्समूलर ने अपनी पुस्तक India what can it teach us page ११८ में स्पष्ट लिखा है कि The vedas may be called Primitive, because there is no other literary doucument more primitive than it but the language] the mythology] religion and philosophy that meat us in the veda open vistas of the past which no one could venture to measure in years- अर्थात् वेदों को हम इसलिए आदि सृजन कह सकते हैं कि उनसे पूर्व का कोई अन्य लिखित चिन्ह नहीं मिलता। परन्तु वेदों के भीतर जो भाषा, देवमाला, धर्म और आध्यात्मविद्या का ज्ञान हमें मिलता है, वह हमारे सामने इतनी प्राचीनता का दृश्य दिखलाता है कि कोई भी मनुष्य उस प्राचीनता को वर्षों की संख्या में नहीं ला सकता। पुनः पाश्चात्य विचारक मौरिस फिलिप ने अपनी पुस्तक Teaching of the vedas page २४४ में लिखा है कि After the latest researches in to the history and chronology of books of old testament] we may safely now call the Rigveda as the oldest book not only of the aryan humanity but of the whole world- The conclusion therefore is invitable, that in the development of religious thought- India has been uniformly downward and not onward deterioration and not evolution] we are justified] therefore in concluding that higher and purer conceptions of the vedic aryans were the results of a primitive divine revelation अर्थात् वेद भारत की ही नहीं, अपितु समस्त संसार की सबसे प्राचीन सनातन धर्म पुस्तक है। संसार की सभ्यता का आदिम स्रोत वेद है। क्योंकि वेद ईश्वरीय है, वेद अपौरुषेय है। पुनः प्रो० मैक्समूलर अपनी पुस्तक 'History of sanskrit litrature में लिखते हैं कि किसी भी भाषा के ग्रन्थ ने जो काम नहीं किया, वह वेदों ने संसार के इतिहास में किया है। जिन्हें अपने और पूर्वजों का अभिमान है, जिन्हें बौद्धिक विकास की इच्छा है, इन सबको वेदों का अभ्यास करना नितांत आवश्यक है। अमेरिका के विश्रुत विचारक मि० थौरी वेदों के स्वाध्याय के पश्चात् इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि वेदों की विचारधारा पवित्रतम है। वेदों में प्रकाश, ज्ञान और विज्ञान है। वेद सार्वजनिक, सार्वकालिक और सार्वदेशिक है। वेदों में परमात्मा का पवित्रतम प्रकाश है'। नेशनल हेराल्ड दिल्ली, २५.४.१९७६ के अनुसार अमेरिका के उच्चतम न्यायालय ने वेदों की गरिमा और महत्ता को स्वीकारते हुए जो उद्गार प्रकट किए वह इस प्रकार है- ''वेद स्वतः प्रमाण है। सभ्यता की बुनियाद में भारत ने जो शिला रखी, वह वेद ही है, जिनमें दिव्य ज्योति से युक्त ऋषियों द्वारा परिलक्षित सृष्टि के नियम और उसकी व्यवस्था का प्रकार समन्वित है। जिनकी युग-युगान्तर पर्यन्त लोगों के लाभार्थ एक विशेष भाषा में अभिव्यक्त की गई। यह ज्ञान हमें मौखिक परंपरा द्वारा प्राप्त हुआ है और इसकी व्यवस्था इतनी बारीकी और सुन्दरता से की गई है कि उसमें काट-छाँट वा प्रक्षेप की गुंजाईश ही नहीं है। प्रारम्भिक धर्म का यह सर्वोत्कृष्ट कीर्तिस्तम्भ ऋग्वेद है, जिसमें पुरातत्व का कोई चिन्ह नहीं है। जिसका न कोई मठ है और न कोई मन्दिर है, न कोई संप्रदाय या पंथ है, न कोई संस्थापक है और न वस्तुतः जिसका कोई इतिहास है। जो हिन्दूधर्म (वैदिकधर्म) शास्त्र के सिद्धान्तों व आदर्शों का निरुपण करता है और जिसमें हजारों मंत्र हैं। वस्तुतः इस दिव्य ज्ञान की तुलना संसार के किसी अन्य पुस्तक से नहीं की जा सकती है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि वेद विश्व साहित्य का प्राचीनतम अमर ग्रन्थ है। तभी तो मनु ने अपनी मनुस्मृति २/६ में लिखा है- वेदोऽखिलो धर्ममूलम्। चतुर्वेद संहिताओं में ऋग्वेद संहिता विश्व का **छन्दोबद्ध या पद्यात्मक आदि महाकाव्य है। इस ऋग्वेद संहिता का सिन्धु घाटी में पनपी सभ्यता पर भी प्रभाव रहा है। सैंधव सभ्यता पूरब में काठियावाड़ से पश्चिम में मकरान और उत्तर में हिमालय तक फैली है। यहाँ की मुद्राएँ विभिन्न प्रकार की हैं। जिनमें वहाँ से उपलब्ध सिन्धु मुद्रा में ऋग्वेद संहिता १/१६४/२० की चित्र लिपि अंकित है। इससे पाश्चात्य पुरातत्त्ववेत्ता सर जॉन मार्शल द्वारा रचित विश्रुत पुस्तक ''मोहनजोदड़ो एण्ड इन्डस सिविलाइजेशन'' में अंकित मार्शल प्लेट नं. ३८७ में देखा जा सकता है। विश्व का आदि ग्रन्थ ऋग्वेद संहिता में इस भाव को प्रकट करने वाला मंत्र निम्नलिखित है-**

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्ष परि षस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वादवत्त्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति ।।

(द्वा सुपर्णा) दो पक्षी, एक चेतन परमात्मा और दूसरा चेतन आत्मा (सयुजा) समान आयु के, अनादि और अनन्त (सखाया) आपस में मित्र (समान) अपने ही समान आयु के, अनादि और अनन्त (वृक्ष) जड़ प्रकृति रूपी वृक्ष पर (परिषस्व जाते) आकर बैठे (तयोः) उन दोनों में से (अन्यः) एक आत्मा (पिप्पलं स्वादवत्ति) पीपल के फलों को स्वाद ले लेकर खाने लगा और (अन्यः) दूसरा पक्षी परमात्मा (अनश्नन्) न खाता हुआ केवल (अभिचाकशीति) निहारता रहता है।

यहाँ स्पष्ट कहा गया है कि काटे जाने वाले वृक्ष के समान नश्वर देह में जीवात्मा आश्रित है और विराट ब्रह्माण्ड में परमेश्वर। जीवात्मा सुस्वाद मधुर फल के समान अपने पुण्य पाप रूप कर्मों का, सुख-दुख रूप फल का भोग करता है और परमेश्वर साक्षीमात्र है। यहाँ विरोधी स्वभाव वाले जीव और ब्रह्म की परिस्थिति व्यक्त करने के लिए इस ऋग्वेद मंत्र की कथन शैली इतनी प्रसिद्ध हुई कि अथर्ववेद संहिता ९/९/२०, मुण्डकोपनिषद तथा श्वेताश्वेतरोपनिषद ४/६ और श्रीमद् भागवतपुराण ११/११/६-७ में उसी रूप में अथवा कुछ परिवर्तन के साथ उक्त मंत्र की आवृत्ति हुई है और वह सर्वज्ञानमय वेद स्वतः प्रमाण है। इसमें दिव्य प्रेरणा की अमंद ज्योति है, ऋत प्रवीत गति का अलौकिक निनाद स्पंदित है, शाश्वत समन्वय की दिशा है, यह भविष्य की राह प्रस्तुत करने के लिए दिव्यता भव्यता और पवित्रता का आलोक स्तंभ है, जो चरैवेति चरैवेति की अमंद गति का मंगलमय वरदान है। इसमें वैश्विक मानव कल्याण का शीतल अमृत छलकता रहता है। इसमें वैज्ञानिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक विकास के सनातन सिद्धान्तों और स्वस्तिक संस्कारों का व्यापक एवं विशद चित्र कलापूर्ण एवं मनोहारी शैली में अभिव्यक्त हुआ है। यह मनुष्य को मनुष्य से और उपस्थित वर्तमान को अनागत कालखंडों से आबद्ध करता है। इसकी मनोहारिणी मृदु गंभीर ऋचाएँ अपनी विविधता, विलक्षणता और सूक्ष्मता के साथ विश्व की अधिकांश संमृद्ध भाषाओं के बीच अपनी सर्वतोभद्र साहित्यिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक, धार्मिक, भाषिक एवं ऐतिहासिक महार्घ महत्ता के साथ अंकित है। यह व्यक्ति की चिन्मय चेतना तथा चारुता का सर्वोन्मुखी विकास करता है। इसके अध्ययन- अनुशीलन तथा चिन्तन अनुचिन्तन से जीवन और जगत की मुख्य जीवनधारा में संवेदना, सामरस्य और सोमनस्य का सर्वतोन्मुखी विकास होता है। एतदर्थ अनादिकाल से भारतीय जनता इसमें आचरण और उच्चारण के समस्त संदर्भों में जीवन व्यवहार के प्रत्येक कार्य व्यापार के लिए सतत दिव्य प्रेरणा और प्रमाण ढूँढती आई है। यह एक सर्वतोभद्रमय समरसता का मानसरोवर है, जिसके पावन तट पर सामाजिक जीवन सरस सौरभ और सौन्दर्य-सुषमा से ही विभोर नहीं होता, वरन अपनी युगों की प्यास भी मिटाता है तथा अपनी चंचल चित्तवृत्तियों को दिव्यगुणों से सुरभित एवं प्रशान्त बनाने का भी अवसर पाता है। इसकी विराट चेतना का संस्कार सार्वभौमिक, मंगलकारक और समूहमूलक है। इसमें ज्ञान-विज्ञान सहित अंड पिंड ब्रह्माण्ड तथा आध्यात्म विद्या के अनेक गहन गूढ़ सिद्धान्त प्रासादिक भाषा में अनुस्यूत हैं। अतः इसकी मधुमयी मधुरिमा में जो जिस दृष्टि से अवगाहन करता है, अपनी अभिलषित वस्तु प्रभूत मात्रा में प्राप्त कर लेता है। इसमें अभिमत फल देने वाली कामधेनु और कल्पतरु की क्षमता पूरी-पूरी मात्रा में विद्यमान है। जिसकी प्रशंसा प्रत्येक दृष्टि से पौर्विक एवं पाश्चात्य मनीषियों विचारकों के द्वारा बहुविध की गई है। अद्वैत वेदान्त के अनन्यतम संस्थापक श्रीमदाद्य जगद्गुरु शंकराचार्य ने वेदान्त दर्शन का 'शास्त्रयोनित्वात् ' सूत्र के भाष्य में वेदों को संपूर्ण ज्ञान-विज्ञान तथा आध्यात्म विद्या का आदि स्रोत बतलाया है।

कतिपय प्राच्य और पाश्चात्य विद्वान विचारकों का कथन है कि ज्योतिष विज्ञान के प्रमुख आचार्य आर्यभट, ब्रह्मगुप्त और भास्कराचार्य हैं। आचार्य आर्यभट ने पाँचवीं सदी में बताया कि ग्रह सूर्य के चारों ओर गोलाकार पथ पर न चलकर अण्डाकार कक्ष (elliptical orbit) पर चक्कर काटते हैं। पुनः आर्यभट ने ही बतलाया है कि पृथिवी गोल है और इसपर इसकी दैनिक गति के कारण दिन रात होते हैं। किन्तु पूर्व ग्रहों से मुक्त होकर विहंगम दृष्टि से विचार करने पर यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक खगोल विज्ञान जिस रहस्य का उद्घाटन करता है, उसका विश्व के आदिग्रन्थ वेदों की ऋचाओं में इसका बहुत पहले ही वर्णन हो चुका है कि पृथिवी सूर्य के चारों ओर घूमती है। इसका संकेत यजुर्वेद ३/६ की निम्नलिखित ऋचा में स्पष्ट है- आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः। पितरं च प्रयन्त्स्वः ।। अर्थात् यह भूगोल जल सहित सूर्य के चारों ओर घूमता है। इसलिए यह भूमि घूमा करती है। इस सत्य का प्रतिपादन पुनः अथर्ववेद १२/१/५२ में किया गया है- यस्यां कृष्णमरुणं च संहिते अहोरात्रे विहिते भूम्यामधि। वर्षेण भूमिः पृथिवी वृत्तावृत्ता सा नो दधातु भद्रया प्रिये धामानि धामनि ।। अर्थात् जो पृथिवी के दैनिक एवं वार्षिक वृत्तावृत्त होते हैं और इसके तीस दिन बारह महीने धाम हैं, वह हमारी रक्षा करे। यहाँ पर स्पष्टतः पृथिवी और भूमि के साथ वृत्तावृत्त शब्द दो बार आया है, जिससे इसके दैनिक एवं वार्षिक

क्रमशः.....५ पर

पृष्ठ ४ का शेष.....

गतियों का स्पष्ट संकेत होता है। इस वृत्त शब्द का अर्थ चक्कर यहाँ ध्यातव्य है। जिस मार्ग से होकर पृथिवी सालभर घूम आती है, वही राशि पथ है। पुनः ऋग्वेद १/३३/८ में पृथिवी के गोल होने और घूमने का भी वर्णन है- चक्राणासः परिणहं पृथिव्या हिरण्येन मणिना शुम्भमानाः । न हिन्वामानासस्तितिरुस्त इन्द्रं परि स्पशो अदधात्सूर्येण ।। अर्थात् पृथिवी गोलाकार है, इसका आधा भाग सूर्य से प्रकाशित होता है और आधा भाग अंधकारावृत्त रहता है। यह सूर्य के आकर्षण से ही ठहरी है। इसके आगे ऋग्वेद १०/८५/१६ में चन्द्रमा के नवीन नवीन होने का वर्णन इस प्रकार है- नवोनवो भवति जायमानोऽन्हां केतुरुषसामेत्यग्रम्। भागं देवेभ्यो वि दधात्यायन्प्र चन्द्रमास्तिरते दीर्घमायुः ।। अर्थात् यह चन्द्रमा रोज नया-नया होता हुआ दिखाई पड़ता है, जो हमें दीर्घ जीवन देता है। इस चन्द्रमा के विषय में यजुर्वेद १८/४० में लिखा है- 'सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वस्तस्य''। जिस पर निरुक्तकार महर्षि यास्काचार्य कहते है- अथाप्यस्यैको रश्मिश्चन्द्रमसं प्रतिदीप्सति । अर्थात् सूर्य की एक किरण चन्दमा को प्रकाशित करती है। इससे ज्ञात होता है कि चन्दमा में उसका निज का प्रकाश नहीं है, किन्तु वह सूर्य से ही प्रकाशित है। पुनः ऋग्वेद में कहा गया है- उक्षा दाधार पृथिवीमुत द्याम्। अर्थात् पृथिवी सूर्य के आधार पर ठहरी है। ऋग्वेद १०/१४६/१ में सविता यन्त्रैः पृथिवीमरम्णादश्कग्भने सविता द्यामदृहंत्'। अर्थात् परमात्मा ने यन्त्र से नापकर पृथिवी को उसकी परिधि पर घूमा दिया है और धुरी पर सूर्यादि लोकों को बाँध दिया है।

सूर्य ग्रहों का राजा है। इसमें प्रभूत आकर्षण शक्ति है। जिसके कारण सभी ग्रह इसके चारों ओर चक्कर लगाते हैं। इनकी पारस्परिक आकर्षण शक्ति के कारण ये ग्रह अपनी निश्चित परिधि में घूमते रहते हैं। ऋग्वेद १/३५/२ में इस तथ्य का प्रतिपादन स्पष्टतः हुआ है- आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्य च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।। अर्थात् धुरी के चारों ओर घूमने वाला यह सूर्य सौर मंडल के भूमि आदि नक्षत्रों को अपनी आकर्षण शक्ति के द्वारा रोके हुए हैं।

भारतीय ज्योतिष विज्ञान के सर्वश्रेष्ठ आचार्य भास्कराचार्य माने जाते हैं। बारहवीं शताब्दी में इन्होंने एक ग्रन्थ सिद्धान्त शिरोमणि लिखा। इसमें गुरुत्वाकर्षण और गुरुत्व बल की खोज कर अपने ग्रन्थ में इसको इस प्रकार समझाया कि ''आकृष्टिः शक्तिश्च मही तपायत स्वस्थं गुरु स्वामि मुखं स्व शक्त्या।'' अर्थात् भूमि में आकर्षण शक्ति है। इसलिए आकाश में स्थित भारी पदार्थों को भूमि अपनी शक्ति से अपनी ओर खींच लेती है। आकाशीय पिण्डों के बीच आकर्षण का बल कार्य करता है। जिससे वे अपना-अपना कक्ष नहीं छोड़ते। बाद में सतरहवीं शताब्दी में इसी नियम को इंगलैंड के सर आइजेक न्यूटन ने ५०० वर्षों के बाद बताया, जो आजकल न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नाम से प्रसिद्ध है। इन्होंने अपनी सारी खोजों को प्रिन्सिपिया नामक पुस्तक में लिखा है। यह पुस्तक लैटिन भाषा में लिखी गई है।

सूर्य जीवों का जीवन है। जीव-जन्तुओं के अतिरिक्त उद्भिदों का जन्म, विकास और पोषण इसके विना असंभव है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि अंधेरे कमरे में जब किसी गमले में लता को रखा जाता है, तब वह उस ओर बढ़ती है, जिस ओर से प्रकाश का प्रवेश होता है। सूर्य भूमि के जल को ऊपर खींचकर उससे प्राणियों को सींचता है। इससे सूर्य की प्राणदायिनी शक्ति का पता स्पष्ट होता है। सूर्य की उष्मा ज्यों-ज्यों उद्भिदों का अधिक रस सींचती जाएगी, त्यों-त्यों पेड़-पौधे बढ़ते जाएँगे। उद्भिद विज्ञान के इस सिद्धान्त का प्रतिपादन ससार के आदि ग्रन्थ ऋग्वेद १०/७९/३ में इस प्रकार किया गया है- प्रमातु प्रतरं गुह्यमिच्छन्कुमारो न वीरुधः सर्पदुर्वीः। ससं न पक्वं अविदच्छुचन्तं रिरिन्ह्वांसं पि उपस्थे अन्तः।। अर्थात् पृथिवी की बहुत-सी लताओं में और उन लताओं के उत्कृष्टतम गुह्यस्थान मूल में इच्छा करता हुआ बच्चे के समान पानी (रस) सरकता है। भूमि का रस जल (ऊर्ध्व प्रसरण) ऊपर की ओर खींचता है, तो वृक्ष बढ़ते हैं तथा जब तिर्यक प्रसरण करता है तब पुष्ट होते हैं। यह एक वनस्पति विज्ञान है। इस संबंध में उपर्युक्त वेदमंत्र के प्रतरण शब्द पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि पृथिवी का रस जितना ही हृष्ट-पुष्ट तथा शक्तिशाली होगा, वृक्ष उतना ही बढ़ेगा। आधुनिक विज्ञानवेत्ता प्रयोगशाला में परीक्षण करके दिखाते हैं कि जल के घटक तत्व ऑक्सिजन और हाईड्रोजन नामक दो गैसें हैं। उनमें विद्युत धारा प्रवहित करने से जल उत्पन्न हो जाता है तथा 'विद्युत द्वारा जल को फाडने पर उक्त दोनों गैस विभक्त हो जाती हैं। इस संबंध में ऋग्वेद १/२/७ का निम्नलिखित मंत्र द्रष्टव्य है- मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसं। धियं घृताचीं साधन्ता ।। इसमें दोनों गैसों को मित्र और वरुण नाम दिया गया हैं। पुनः अथर्ववेद ५/१६/१५ में वर्षा को मित्र तथा वरुण से मिलकर बना हुआ कहा गया है। ''न वर्षा मैत्रावरुणं ब्रह्मज्यमभिवर्षति । इस प्रकार वेदों में भौतिक विज्ञान और रसायन शास्त्र के अनेक सिद्धान्त स्पष्ट रूप से पाए जाते हैं। एडिनबरा विश्वविद्यालय के श्रीपन्यम नारायण गौड़ ने मुक्तकंठ से कहा है कि ऋग्वेद वैज्ञानिक सिद्धान्तों और परीक्षणों का निरुपण करता है। जबकि उनके साधनों और उपकरणों के तैयार करने की प्रक्रिया यजुर्वेद में पाई जाती है, जो परिणाम स्वरूप एक परीक्षणशाला मार्ग दर्शक है।

इन्द्रधनुष में सात रंग- सूर्य की किरणों में सात रंग पाए जाते हैं, जो हमें इन्द्रधनुष में देखने को मिलते हैं। ये सातों रंग है- (वै.नी.आ.ह.पी.ना.ला)। अर्थात् बैगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारगी और लाल रंग। इन सातों रंगों को आपस में मिला देने पर सफेद रंग हो जाता है। इसीलिए सूर्य की किरणें सफेद दिखती हैं। इसका वर्णन विश्व के आदिग्रन्थ ऋग्वेद २/१२/१२ में पाया जाता है- यः सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् । अथर्ववेद ७/११२/१ में भी- अव दिवस्तारयन्ति सप्त सूर्यस्य रश्मयः । आपः समुद्रिया धारास्तास्ते शल्यमसिस्तसन् ।। ऋग्वेद ८/७२/१६ में ''सूर्यस्य सप्तरश्मिभिः'' कहा गया है। यहाँ सूर्य की सात किरणें अन्तरिक्ष की जलधाराओं को आकाश से बरसाती है। यहाँ स्पष्ट कहा गया है कि सूर्य की किरणों में सात रंग हैं। अर्वाचीन विज्ञान कहता कि इन सात रंगों में मूल रंग तीन हैं- लाल, पीला, नीला। शेष रंग मिश्रण हैं। लाल + नीला = बैंगनी, नीला. पीला = हरा, लाल पीला नारंगी रंग बनाते हैं।

भारतीय महान वैज्ञानिक नोबल पुरस्कार विजेता सर चन्द्रशेखर वेंकट रमन ने सन् १९३० ई. में सूर्य के सात रंगों का पता लगाया। इन रंगो को रमन किरण और इस प्रभाव को रमन प्रभाव कहा जाता है। जो इन्होंने २८ फरवरी को पूरा किया। अतः २८ फरवरी का दिन प्रतिवर्ष इन्हीं के सम्मान में 'राष्ट्रीय विज्ञान दिवस' के रूप में मनाया जाता है। इस आविष्कार ने सिद्ध कर दिया कि जब अणु प्रकाश को बिखेरते हैं, तो उस समय मूल प्रकाश में परिवर्तन हो जाता है। नवीन किरणों की उपस्थित से हम यह परिवर्तन देख सकते हैं। परक्षिप्त प्रकाश में जो किरणे दीख पड़ीं, वे रमन प्रभाव अथवा रमन किरणें कहलायी। इस आविष्कार के उपलक्ष्य में इनको विश्व का सबसे महान एवं सर्वश्रेष्ठ पुरष्कार 'नोवल पुरष्कार' सन् १९३० में प्रदान कर इनका सम्मान किया गया। कहते हैं कि इन्होंने अपनी इस खोज के लिए उपकरणों पर मात्र २०० रु. खर्च किए थे। रमन प्रभाव ने क्वान्टम सिद्धान्त को मजबूत संबल प्रदान किया। १९५४ ई. में भारत सरकार ने इन्हें 'भारत रत्न' नामक सर्वोच्च उपाधि से विभूषित किया। एतदर्थ शास्त्रियों ने इनकी विश्व के महान गणितज्ञों, भौतिकविदों एवं रसायन भूरि-भूरि प्रशंसा की और इसका लाभ उठाया।

तभी तो उन्नीसवीं शताब्दी के महान वेदार्थ क्रान्तदर्शी महर्षि दयानन्द सरस्वती ने कहा है कि ईश्वर से तृण पर्यन्त जितने पदार्थ हैं, उन सबका वर्णन वेदों में है। इस कथन का समर्थन करते हुए योगिराज श्री अरविन्द ने अपनी सम्मति प्रकट की है कि वेदों में केवल धर्म ही नहीं, अपितु विज्ञान भी है। महर्षि दयानन्द सरस्वती के इस विचार में चौकने की कोई बात नहीं है। मेरा विचार तो यह है कि वेदों में विज्ञान की ऐसी बातें भी हैं, जिनका पता आज के वैज्ञानिकों को नहीं चला है। इनके अतिरिक्त विदेशी विद्वानों ने भी वेदों की मुक्तकंठ से प्रशंसा करते हुए लिखा है कि अबतक जितने भी विज्ञान विश्व में दृष्टिगोचर हुए हैं, वे सब वेदों से ही आए हुए हैं। अमेरिकन विदुषी महिला मिसेज ह्वीलर विलाक्स ने वेद में विज्ञान है यह सिद्ध करती हुई लिखती है कि हमने प्राचीन भारत के धर्म के विषय में सुना और पढ़ा है। यह उन वेदों की भूमि है जो अत्यन्त अद्भुत ग्रन्थ है, जिनमें न केवल जीवन के लिए उपयोगी धार्मिक तत्त्व बताए गए हैं, बल्कि उन तथ्यों का भी प्रतिपादन किया गया है। जिन्हें समस्त विज्ञान ने सत्य प्रमाणित किया है। बिजली, रेडियम, एलेक्ट्रोन, विमान आदि चीजें वेदों के द्रष्टा ऋषियों को ज्ञात प्रतीत होती है। पुनः वेदज्ञ प्रोद्र विल्सन ने ऋग्वेद के अनुवाद द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि सूत्र और ब्राह्मण काल से भी पूर्व वेदों में कला, विज्ञान, आभूषण कवच, अस्त्र, शस्त्र, औषधियाँ और उनके प्रतिकार एण्टीडॉट, समय विभाग, न्याय, नियम आदि सभी बातें पायी जाती हैं। आजकल का 'कार' (CAR) वैदिक शब्द है कार का एक अर्थ रथ भी होता है। ऋग्वेद ६/१४/१ में कार शब्द का प्रयोग आया है- ''कार बिभ्रत्पुरूस्पृहम्''। अर्थात् कार रखने वाला बहुकांक्षी होता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि विश्व के प्राचीनतम ध्वन्यात्मक अमर महाकाव्य वेद संपूर्ण ज्ञान-विज्ञान का अनुपम कुबेर कोश है। यह ज्ञान-भक्ति की गंगोत्री है तो ज्ञान-विज्ञान का मानसरोवर भी। इसका भंडार अत्यन्त समृद्ध, विपुल और व्यापक है। जिस तरह पृथिवी संपूर्ण विटप, फल, फूल और लता, वनस्पतियों का उद्गम स्थल है, जो अनुकूल समय और ऋतु के आने पर अंकुरित, पल्लवित और पुष्पित होते रहते हैं, ठीक उसी तरह स्वतः प्रमाण वेद ज्ञान-विज्ञान का अक्षय भंडार है। प्राचीनकाल, मध्यकाल और आधुनिक काल में वेदों के साक्षात् श्रवण, अध्ययन, अनुशीलन, चिन्तन, मनन तथा विवेचन, विश्लेषण से विज्ञान विकसित और विस्तृत होकर संपूर्ण जगत को आलोकित करता रहा है। आधुनिक युग के विज्ञान के अनुसंधाताओं और अनुशीलन कर्ताओं का ध्यान इस ओर गया है। एतदर्थ इस संदर्भ में वेद और वैदिक वाङ्मय विज्ञान परख सम्यक् विवेचन-विश्लेषण किया जा रहा है। इसका अपना महत्त्व अक्षुण्ण है।

चलभाष-९१६२२०८००५

आवश्यक सूचना

आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ द्वारा पंजीकृत समस्त आर्य समाजों को निर्देशित किया जाता है। सभा द्वारा जारी विवाह प्रमाण पत्रों में जारी किये गये प्रमाण पत्रों की ''सभा प्रति'' सभा कार्यालय में अतिशीघ्र जमा करा दें।

-कार्यालय अधीक्षक
आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र., लखनऊ

''देव शयनी और देव उठनी एकादशी का प्रयोजन और उसकी वैदिक अवधारणा''

– आचार्या विमलेश बंसल आर्या

यहां जिन देवों को जगाने सुलाने की बात हो रही है वह न तो जड़ देवों की बात न ईश्वर की, क्योंकि जड़ देव ईश्वर के आधीन हैं हमारे नहीं, और ईश्वर सोता और जागता नहीं क्योंकि अजर अमर तथा शरीरों के संयोग वियोग से रहित है उसको आवश्यकता नहीं शरीर धारण की, इसलिए स्वभाव में नहीं।

यहां बात हो रही घर के पुरुष देवों की।

आइए अब 'देव शयनी' को जानेंगे – गृह देवताओं का वह शयन काल, अर्थात् गृह देवों के इंद्रियों द्वारा किए जाने वाले कृषि, व्यापार आदि कर्मों के लिये अनुपयुक्त काल। वह कृषि, व्यापार आदि कार्यों का निष्क्रिय समय अर्थात् जब कार्य करने में प्रकृति का असहयोग हो, ऐसा वह काल चातुर्मास्य – वर्षाकाल होता है वर्षाकाल ही गृह देवों का बाह्यकार्य की दृष्टि से शयन काल कहा जाता है, कि वर्षाकाल आरंभ हो गया।

अब 'देव उठनी अर्थात् वेद प्रबोधिनी एकादशी' क्या??

गृह देवों का धन कमाने बाहर जाने का वह उपयुक्त समय – जाग्रत काल कहा जाता है। वही देव उठनी के नाम से पुकारा जाता है। मतलब देव पुरुष अपने कार्यों के लिए तैयार हों।

गृह देव जब बाहर जा व्यापार आदि कार्य करने प्रवृत्त होते हैं।

देवताओं के उठने अर्थात् जागने के समय से तात्पर्य कृषि, व्यापार आदि कार्यों को करने के लिए उपयुक्त सक्रिय काल है, प्रकृति का पूर्ण सहयोग और वर्षाकाल की समाप्ति।

इसलिए लोग एक अभिनय जनक पूजा का उपक्रम करते हैं जो ईश्वर को धन्यवाद स्वरूप होता है। जिसमें नवान्न को एक पात्र में रखा जाता है और जगाने का गायन किया जाता है यदि यही वेद मंत्र यो जागारः जैसे वेद मंत्रों की व्याख्या जन सामान्य को बताने यज्ञ द्वारा उपक्रम हो तो कितना अच्छा हो जिससे वैदिक संस्कृति की रक्षा भी हो और सही संदेश भी।

'एकादशी क्या??'

एकादशी तिथि को कहते हैं।

एकादशी व्रत?'

एकादशी व्रत वह संकल्प आचरण है जो ११ इंद्रियों को सफल करने लिया जाता है।

'एकादशी ही क्यों ? द्वादशी क्यों नहीं??'

क्योंकि हमारी मन सहित ५ ज्ञानेंद्रियां और ५ कर्मेंद्रियां होती हैं। उन्हीं से सब कार्य सिद्ध होते हैं वे ही हमारी साधन हैं। अतः एकादशी ही अपेक्षित है।

'एकादशी व्रत से लाभ?' – ११ इंद्रियों को विजेता बनाने सूचक, प्रतीकात्मक एकादश तिथि में अपनाए जा रहे विशिष्ट साधनों से साध्य परमेश्वर की सन्निधि में रह साफल्य प्राप्त करना है।

जिससे ११ इंद्रियों को नियंत्रित करने की प्रेरणा मिलती है। जिससे लोग तिथि के नाम से अपनी इंद्रियों पर बोध कर कर्तव्य का सम्यक निर्वहन कर सकें।

वस्तुतः मनुष्य जीवन का साफल्य तभी है जब मनुष्य मानव चोले में आकर अपनी मनुष्यता को बनाए रखे, मनुष्यता का पतन न होने दे और मनुष्यत्व को धारण करते हुए देवत्व की ओर बढ़े, इसके लिए एकादश इंद्रियों पर नियंत्रण रख इंद्रियजित बने, इंद्रियजित बनने के लिए व्रत संकल्प ले कि मैं आज से अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण करूंगा, सात्विक भोजन करूंगा, नियमित दिनचर्या का पालन करूंगा, सदैव धर्म का ही पालन करूंगा, वैदिक सिद्धांतों के प्रति दृढ़ रहूंगा, ईश्वर का सच्चा साधक बनूंगा, कभी भी विचलित, भयभीत, भ्रमित नहीं होऊंगा। रसना पर पूरा नियंत्रण रखूंगा। किसी भी इंद्रिय से कभी अधर्म, अन्याय, पाप नहीं करुंगा। सदैव विमल वेद के समीप रहूंगा।

देखा जाए तो निराहार तथा फलाहार से शरीर के पाचन कोष्ठ की शुद्धि तथा रसनेंद्रिय पर नियंत्रण करने की कुशलता प्राप्त होती है। रसनेंद्रिय पर जिस मनुष्य का नियंत्रण हो जाता है वह फिर अन्य इंद्रियों को भी नियंत्रित सरलता से कर पाता है।

किंतु वर्तमान में ज्यादातर व्रत नियंत्रण के कम, स्वाद निमंत्रण के अधिक देखे जाते हैं। कहीं न कहीं हम भौतिकता की चकाचौंध में सत्य को भूल गए हैं मिथ्या बाह्य आडंबरों के चलते पतन को प्राप्त हो रहे हैं। यजुर्वेद – ४० कहता है हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितम् मुखम्,

'देवता कौन??'

जिनमें देवत्व के गुण समाहित होते हैं,

जो इंद्रियजित होते हैं वे ही चेतन पुरुष देव कहलाते हैं ईश्वर ने यह देव बनने की ताकत हम सभी मानवों को भेंट की हुई है।

४ मास तक घरों के देवता पुरुष वर्षाकाल की वजह से घरों से बाहर धन कमाने नहीं निकल सके, धर्म भी धन से हो पाता है। वर्षा काल के पश्चात अब वे पुनः अपने काम पर जाने के लिए तैयार हो चुके हैं क्योंकि प्रकृति ने अब उनके लिए स्वतः ऋतु परिवर्तन द्वारा अपना द्वार खोल दिया है विजयादशमी पर्व मना अपने साहस से क्षत्रियों ने असुरों से, दुर्जनों से, दुष्टों से धरा को स्वच्छ कर रास्ते के बाधक तत्वों, रोड़ों को भी हटा दिया है।

सारे रास्ते कामकाजियों, व्यापारियों के आलिंगन के लिए लिए तैयार है।

हमारी सनातन संस्कृति इतनी मजबूत है कि इस पर कितनी भी अज्ञान की कालिख आजाए, पड़ जाए, वा फेंकी जाए, यह वापिस अपने मूल को खोज ही लेती है।

समस्त व्रतों पर्वों उत्सवों को मनाने के पीछे उद्देश्य भी यही??

यथार्थ अर्थात् वास्तविकता से परिचय कराना, प्रेरणा देकर घर परिवार समाज को जाग्रत करना, निराशा, अंधकार से आशा, प्रयास, प्रकाश, प्रसन्नता पूर्णता की ओर बढ़ाना।

तथा ऊंच नीच, भेदभाव की मैली चादर से निकाल सभी वर्णों को योग्यतानुसार समानता, न्याय, शुभता का पाठ पढ़ाना।

व्यक्तिगत उन्नति हो वा पारिवारिक समाजिक हो वा राष्ट्रीय, सभी उन्नतियां व्रत संकल्पों पर टिकी हैं।

असुरों का संहार हो वा देवों की सुरक्षा।

ईश्वर की खोज हो वा व्यक्ति गत मौज हो,,

बिना संकल्प लिए कोई कार्य सिद्ध नहीं होते।

'उद्यापन कब??'

हम देखते हैं जब व्यक्ति वृद्ध हो जाता है शारीरिक अस्वस्थता और मानसिक परिपक्वता होने लगती है तब वह निराहार और फलाहार से औषधियों पर आ जाता है अर्थात्–

जब व्यक्ति गृहस्थ से वानप्रस्थ और फिर संन्यास की ओर बढ़ता है

तत्पश्चात कार्यों से निवृत्ति का समय और तन की असमर्थता तथा ज्ञान परिपक्वता आ ही जाती है व्रत भी पूर्णता की ओर होता है।

इसलिए यह उद्यापन बढ़ी हुई आयु में ही करते हुए देखा जाता है।

आओ हम सब सच्चे व्रती बनें, परमेश्वर से प्रार्थना करें – ओ३म् अग्ने व्रतपते व्रतम् चरिष्यामि तच्छकेयम् राध्यताम्। इदम अहम् अनृतात् सत्यमुपैमि– तथा पुरुषार्थ से इंद्रियजीत हो हम सभी अपना परम प्रयोजन सिद्ध करें।

विद्या–धर्म का आठवाँ लक्षण।

–प्रशान्त वेदालंकार।

महर्षि दयानन्द ने विद्या प्राप्त करने की प्रेरणा अनेक स्थलों पर दी है।

– अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

– विद्या का जो पढ़ना–पढ़ाना है यही सबसे उत्तम है।

– स्वाध्याय (पढ़ना) और प्रवचन (पढ़ाना) का त्याग कभी नहीं करना चाहिए।

– विद्यादि शुभ गुणों को प्राप्त करने के प्रयत्न में अत्यंत पुरुषार्थ की इच्छा ही मन का संकल्प है।

– संतानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभाव–रूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और संबंधियों का मुख्य कर्म है। सोने, चांदी, माणिक, मोती, मूंगा आदि रत्नों से युक्त आभूषणों के धारण कराने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी भी नहीं हो सकता, क्योंकि आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु भी संभव है।

– अन्य सब कोष व्यय करने से घट जाते हैं, और दायभागी भी निजभाग लेते हैं। विद्या–कोष का चोर वा दायभागी कोई नहीं हो सकता।

– जब मनुष्य लोग सत्य विद्या को पढ़ेंगे, तभी सदा सुख में रहेंगे। क्योंकि, सभी गुणों में विद्या ही उत्तम गुण है।

– धर्म का रक्षक विद्या ही है, क्योंकि विद्या से ही धर्म और अधर्म का बोध होता है। उनसे सब मनुष्यों को हिताहित का बोध होता है।

महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि स्वाध्याय और प्रवचन का उपदेश इसलिए किया जाता है कि इनसे ही पूर्वोक्त धर्म के लक्षणों की प्राप्ति होती है। विद्या के बिना किसी भी वस्तु का स्वरूप स्पष्ट नहीं होता, विद्या से ही उसके स्वरूप को स्पष्ट करके उसे हम ग्रहण अथवा न ग्रहण करने का निश्चय करते हैं।

महर्षि दयानन्द ने विद्या के ही प्रसंग में इस बात को भी बारंबार कहा है कि कोरा ज्ञान ही विद्या नहीं है। वस्तुओं के स्वरूप को ठीक–ठीक जान लेना ही विद्या नहीं है, वरन् विद्या का जीवन में उपयोग भी हो। वे कहते हैं कि विद्या का यही फल है कि जो मनुष्य को धार्मिक होना आवश्यक है। जिसने विद्या के प्रकाश से अच्छा जानकर न किया और बुरा मान कर न छोड़ा तो क्या वह चोर के समान नहीं है ?

यहां इस बात का उल्लेख करना अनिवार्य है कि यद्यपि 'विद्या' धर्म का एक लक्षण है, किंतु फिर भी जो मनुष्य विद्या पढ़ने की सामर्थ्य नहीं रखते, वे यदि धर्माचरण करना चाहें तो विद्वानों के संग और अपनी आत्मा की पवित्रता एवं अविरुद्धता से धर्मात्मा अवश्य हो सकते हैं। यह सत्य है कि सब मनुष्यों का विद्वान होना संभव नहीं है, किंतु धार्मिक होना सभी के लिए संभव है। जो मनुष्य विद्या कम भी जानता हो, परंतु दुष्ट व्यवहारों को छोड़कर, धार्मिक होके खाने, पीने, बोलने, सुनने, बैठने, लेने, देने आदि व्यवहार सत्य से युक्त यथायोग्य करता है, वह कहीं भी कभी दुख को प्राप्त नहीं होगा। जो संपूर्ण विद्या पढ़के उत्तम व्यवहारों को छोड़के दुष्ट कर्मों को करता है, वह कभी सुख को प्राप्त नहीं हो सकता। ऐसी स्थिति में विद्या को धर्म के लक्षणों में स्थान देने का कारण है सभी को विद्या प्राप्त करने की प्रेरणा देना।

वस्तुतः महर्षि दयानन्द उस व्यक्ति को विद्वान मानते ही नहीं हैं, जो कि अधर्मयुक्त आचरण करे। विद्या शेष सभी धर्म के लक्षणों को जीवन में धारणकर सुखी रहना सिखाती है। यदि कोई व्यक्ति पढ़कर भी सुखी नहीं रह पाता, आधुनिक शब्दावली में वह तनावमुक्त नहीं हो पाता तो वह विद्वान कहलाने का अधिकारी नहीं है। केवल दो तरह के लोग सुखी और तनावमुक्त होते हैं – बिल्कुल ही मूर्ख, और जो अपने से ऊपर उठ जाते हैं – वह अपने मस्तिष्क का अतिक्रमण कर ज्ञानावस्था (विद्या) को प्राप्त कर लेते हैं। अन्य लोग अनेक प्रकार के तनावों और दुःखों में ही जीते हैं।

मूर्ख की तनाव–मुक्ति और विद्वान की तनाव–मुक्ति में महान अंतर है। मूर्ख की तनाव मुक्ति जड़तावश है जबकि विद्वान की तनाव–मुक्ति उसके चैतन्य को प्रकट करती है। अतः व्यक्ति को विद्या प्राप्त कर तनाव–मुक्त रहने का प्रयत्न करना चाहिए।

स्रोत – धर्म का स्वरूप।

नौ देवियाँ

-डॉ० सशील वर्मा

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामविति वधिस्ट।।

ऋण ८/१०१/१५

मैं (चिकितुषे जनाय) प्रत्येक चेतनावाले मनुष्य को (नु प्रवोचम्) कहे देता हूँ कि (आनागाम्) निरपराध (अदितिम्) अहन्तव्या (जाम) गौ को (मा वधिष्ट) कभी मत मार, क्योंकि यह (रुद्राणां माता) रुद्रों-रुद्र देवों की माता है, (वसुना दुहिता) वसुदेवों की कन्या है और (आदित्यानां स्वसा) आदित्यदेवों की बहिन है तथा (अमृतस्य नाभिः) अमरतत्त्व का केन्द्र है।

वैसे तो यह गऊ माता से सम्बन्धित प्रतीत होता है क्यों कि वध करना उचित नहीं। इसलिए उसे अघन्या से सम्बोधित किया जाता है परन्तु यहाँ गौ का अर्थ वाणी भी है। अदिति आत्म शक्ति है, वाणी है, अन्तरात्मा की आवाज है। दबाने से अर्थात इसका हनन करने से यह दब तो जाएगी परंतु इससे तुम्हारी आत्मा नष्ट हो जाएगी। इसी गौ की प्रतिनिधि आधिदैविक में भूमि है, आधिभौतिक में राष्ट्रदेवी है और पशुओं में गौ माता है। भूमि, राष्ट्र और गऊओं की रक्षा करने में ही मनुष्यों की एवं मनुष्य जाति की रक्षा है। ये सब अमृत की नाभियाँ हैं जो अपने-अपने क्षेत्र के आदित्यों, बसुओं और रुद्रों से सम्बन्धित दिव्य शक्तियाँ हैं।

गौ रुद्र देवों की माता है वसुदेवों की कन्या है और आदित्य देवों की बहिन है। आधिदैविक में भूमि माता है। आधिभौतिक में गऊ माता और अध्यात्म में वेद माता है। जब तक हम इन तीनों देवियों का रक्षण करते रहेगें ये हमारे लिए शारीरिक उन्नति का साधन रहेगी।

१. भूमि माता-हमें पालन पोषण के लिए अन्न, फल ओषधियाँ प्रदान करती है। आप सभी को विदित है कि रुद्र ग्यारह है अर्थात मुख्यतः दस प्राण एवं एक जीवात्मा, इन प्राणों की संजीवनी आक्सीजन हमें भूमि पर उत्पन्न होने वाले पेड़ पौधों से ही मिलती है और हमारे द्वारा विसर्जित की हुई कार्बनडाक्साइड को यही वनस्पति ग्रहण कर लेते हैं। प्राणों की रक्षा एवं जीवन का पोषण करने के लिए यही भूमि हमारे लिए जीवन दायिनी का रूप धारण करती है तो हम इसका वध कैसे कर सकते है यही हमारे लिए अमृत की नाभि है।

२. गऊ माता-हमें अपनी माता की तरह हमारा पालन पोषण करती हैं। बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक हमें शक्तिशाली बल एवं जीवन प्रदान करती है।

३. अध्यात्म की वेद माता-गायत्री हमारे प्राणों की रक्षा करती है। गायत्री ब्रह्म प्राप्ति का द्वार है। गायत्री में ही स्तुति प्रार्थना और उपासना समाहित है। गायत्री गान करने वाले की रक्षा करती है।

वाग् वै गायत्री। वाग् वा इदं सर्वं भूत गायति च त्रायते च।
३/१२/१ (छन्दोग्योपनिषद)

अथर्ववेद में ओ३म् स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्। आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिम् द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्। मह्यं दत्त्वा वृजत ब्रह्मलोकम्।। अथर्व १९/७/१

जो हमे आयु, प्राण, प्रजा, पशु वृद्धि, कीर्ति, द्रविणं का आर्शीवाद देती है उसका हम कैसे हनन कर सकते हैं।

इस प्रकार ये तीनों देवियाँ, माताएँ हमारी शारीरिक उन्नति में सहायक है यही हमारी जीवन प्रदायिनी हैं।

गौ वसुओं की दुहिता अर्थात बेटी है। आठ वसु अर्थात जो हमें बसाते है- पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य चन्द्रमा एवं नक्षत्र इन्हीं से प्राप्त हुई ये तीन कन्याएं हैं। आधिदैविक में सूर्यस्य पुत्री उषा। इसी उषा के विषय में ऋग्वेद में कहा गया है।

विश्वऽदानीं सुमनसः स्याम पश्येम् नु सूर्यमुच्चन्तम्। ऋ० ६/५२/५

उस उदय होते जो आगे बढ़ रहा है। आओ हम देखें जो मन को प्रसन्न कर रहा है। वास्तव में उषा काल का दृश्य देखने योग्य होता है और यही उषा हमारे में नया संचार जागृत करती है।

२. आधिभौतिक में दूसरी कन्या ऋतम्भरा अर्थात, हमारी प्रज्ञा बुद्धि है जो हमारी उन्नति का साधन बनती है' "धियो यो नः प्रचोदयात" - यही तो हमारी प्रार्थना है सविता देव से। प्रातः उषा काल में ध्यान लगा कर बैठना हमें अध्यात्म की ओर अग्रसर करता है। प्रज्ञा बुद्धि प्राप्त कर के हम अपने जीवन को सफल बनाने का प्रयास करते है।

३. इसी प्रकार अध्यात्म में तीसरी कन्या वाणी है जिसके द्वारा हम मनन किए हुए बुद्धि द्वारा निर्णयत प्रस्तावना रखते हैं। इसी लिए अथर्ववेद में प्रार्थना की गई है कि मेरी वाणी उतनी मधुर हो कि मेरा पूरा जीवन माधुर्यमय हो।

जिस्वाया अग्रे मधु मे जिस्वामूले मधूलकम।
ममदेह क्रतावसों मम चित्तमुपायसि।। अथर्व १/३४/२

अतः ये तीनों कन्याएँ हमारी आत्मिक उन्नति में सहायक होती है। हम उषा काल में प्रज्ञा बुद्धि प्राप्त कर मुधर वाणी द्वारा अपने जीवन को आत्मिक उन्नति से स्फुटित कर अपना मार्ग प्रशस्त करें।

स्वसाआदित्यानाम् - आदित्यों की ये बहिने हैं। हमें विदित है कि ये १२ आदित्य हमारे जीवन मे क्या महत्व रखते हैं। सृष्टि का निर्माण, सम्वत्सर को प्राप्त करने में, दिन रात्रि को विभक्त करने में उस परमपिता ने इन्हें अपने नियमानुसार निर्मित किया। इन्ही आदित्यों की ये तीन बहिने ईड़ा भारती और सरस्वती हमारी सामाजिक उन्नति में पूर्णतया सहायक होती हैं।

१. ईडा- अर्थात संस्कृति। किसी भी राष्ट्र का सम्मान उसकी सभ्यता एवं संस्कृति से ही निर्धारित होता है। हमारी सस्कृति हमें सिखाती है- मातृमान् पितृमान, आचार्यवान् पुरुषो वेद। इसी प्रकार पांच देव हैं, जिसकी पूजा हमारा कर्तव्य है- मातृदेव पितृदेव आचार्य देव, अतिथि देव एवं पत्नी के लिए पति व पति के लिए पत्नी देव। यदि इन को हम स्वीकार करते है, सम्मान करते हैं पालन करते है तो निश्चय रूप से अपनी संस्कृति का रक्षण करते हैं। यह तो है आधिदैविक बहिन जो हमारे जीवनयापन के मार्ग को उच्च स्तर पर ले जाते हैं।

२. आधिभौतिक में दूसरी बहिन है भारती अर्थात हमारी सभ्यता। इसमें यज्ञ, संगठन, मित्रता, देवपूजन एवं सेवा आदि समाहित हैं। उन्हीं के द्वारा हमारी सामाजिक उन्नति होती है। यदि हम यज्ञ करते रहे, संगठन में प्रेम भाव से रहे, मित्रता पूर्वक एक दूसरे के प्रति व्यवहार करते रहे। लो निश्चय रूप में हम अपने, परिवार, समाज एवं राष्ट्र को उन्नति के मार्ग पर ले जाएंगे। इसके विपरीत तो ईष्या, द्वेष, से ग्रसित होकर अवनति की राह ही पकड़ेंगे। तीसरी देवी जो हमारी सामाजिक उन्नति में सहायक है।

३. वह आदित्यों की बहिन सरस्वती है। सरस्वती अर्थात वेद- शिक्षा। वेदों से प्राप्त किया हुआ ज्ञान अब जन जन को जागृत करता है। वह वाणी के रूप में प्रचार-प्रसार करता हुआ विश्व को प्रकाशित करता है। जिस प्रकार सूर्य उदय होते ही चारों और प्रकाश फैल जाता है और कवि (वह परम पिता परमात्मा) उपदेश देता है

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्यं वरुणस्याऽनेः।
आ प्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्ष सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा।। यजु. ७/४२

और वह वेद ज्ञान पवित्र करने वाला है हम सभी के कल्याण के लिए उस परमपिता परमात्मा ने प्रदान किया।

'पावका न सरस्वती'

वेद वाणी हमें पवित्र करें। ऐसी भावना लेकर यदि हम अपना मार्ग प्रशस्त करते हैं तो जीवन का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। यही हमारी सामाजिक उन्नति का उद्देश्य है। उपरोक्त तीनों शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति को सम्मुख रख कर ही स्वामी जी ने आर्य समाज का छठा नियम बनाया ताकि संसार का उपकार हो सके।

अन्ततः सांराश में यही वह नौ देवियाँ है जो संसार की त्रिविधि उन्नति के लिए सहायक है।

	शारीरिक उन्नति	आत्मिक उन्नति	सामाजिक उन्नति
आधिदैविक	भूमि माता	उषा ईड़ा	
आधिभौतिक	गऊ माता	प्रज्ञा भारती	
आध्यात्मिक	वेद माता	वाणी सरस्वती	
	तीन माता	तीन कन्याएँ	तीन बहिनें
	(माता रुदाणाम्)	(दुहिता वसुनाम्)	(स्वसा आदित्यनाम्)

चलभाष-७००६८२२७२०

यज्ञ कुंड के चारो ओर जल सिंचन का उद्देश्य क्या है?

-रिपुदमन आर्य

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः।।
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम्।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्।।

सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं, अन्न की उत्पत्ति वृष्टि से होती है, वृष्टि यज्ञ से होती है और यज्ञ विहित कर्मों से उत्पन्न होने वाला है। कर्मसमुदाय को तू वेद से उत्पन्न और वेद को अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न हुआ जान। इससे सिद्ध होता है कि सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा सदा ही यज्ञ में प्रतिष्ठित है - गीता - १४-१५।।

"श्लोक १४, १५"-अध्याय ३ - कर्मयोग

सुरक्षा के भावों को लेकर यज्ञकुड़ के चारों ओर जल छिड़का जाता है ।

शतपथ ब्राह्मण में जल को व्रज नाम दिया है -आपो वै वज्रम " वज्र रक्षा का सर्वोत्तम साधन होता है। जल से हमारी सब प्रकार से रक्षा होती है ।

अपवित्रता, अशान्ति, गर्मी, प्यास अकाल आदि से जल सब प्राणियों की रक्षा करता है। समस्त जग को जल जीवन देता है। विधिपूर्वक यथासमय शरीर की आवश्यकतानुसार जल का ग्रहण किया जाए तो औषधस्वरूप हो जाता है।

यजुर्वेद में "अयं यज्ञों भुवनस्य नाभिः" २३.६२ में कहाँ गया है कि जिस प्रकार (अयम्) यह प्रत्यक्ष गुणों वाला (यज्ञः) सबका पूजनीय परमेश्वर (भुवनस्य) अखिल ब्रहमांड की (नाभिः) नियत स्थिति का स्थापक है - उसी प्रकार यह यज्ञ भी सबके लिए आकर्षण का केन्द्र है और जैसे जल हमारे लिए नानाविध स्वगुणों उपकारक व रक्षक है। वै यह यज्ञ भी हमारा अनेक प्रकार से लाभ पहुंचा कर रक्षक होता है।

यजुर्वेद २३.६२ के अनुसार यज्ञ इस भुवन की नाभि, बीच है, केन्द्र है। इसके चारों ओर जल छिड़कने का अर्थ हमारी यह घोषणा है कि जैसे जल पवित्र है, शान्तिप्रद है, सुखदायक है, भेषज है, इषुरूप और जग के लिए जीवनदाता है, वैसे ही यह अग्निहोत्र भी जगत् के लिए पवित्र कारक, शान्तिदायक, सुखदायक, औषधरूप, रोगनिवारक, वर्षा के द्वारा प्रजा की दुर्भिक्ष से रक्षा करने वाला और औषधि, वनस्पति एवं समूचे प्राणिजगत् का जीवनदाता है। इस प्रकार जल के साम्य से यज्ञ की सर्वोत्कृष्टता को घोषित करना ही जल सिंचन का उद्देश्य है।

जैसे जल अपनी विविध शक्तियों से जगत् का रक्षक है, वैसे ही यज्ञ भी अपनी विविध शक्तियों से जगत् का रक्षक है। स्वामी मुनिश्वरानन्द जी और भी-

१- जीव जन्तु यज्ञाग्नि के पास न पहुँचने पावें।

२- दूसरा कारण यह है कि यज्ञ की आहुतियाँ लगाने पर कुछ ऐसी गैसें भी पैदा होती हैं, जिनका समीपस्थ जल में शान्त होना आवश्यक है।

३- तीसरा कारण यह है कि हमने अग्न्याधान के मन्त्र से यज्ञ को भूः भूवः स्वः का रूप दिया, अर्थात् तीनों लोकों का स्वरूप माना है। ब्रह्माण्ड में प्रकाश लोक अर्थात् द्युलोक और पृथिवी लोक के बीच में जल का मार्ग है, अतः यज्ञ कुण्ड में जलती हुई अग्नि को प्रकाश लोक मानो और जहाँ पृथिवी पर यजमान बैठा है, उसे पृथिवी लोक मानो, तब उन दोनों के मध्य जल का मार्ग दिखाना आवश्यक है।

४- पृथिवी के बीच भी भौम अग्नि रहती है और पृथिवी के चारों ओर पानी भरा है, अतः पृथिवी रूप यज्ञ कुण्ड के गर्भ में भौम अग्नि के रूप में यज्ञाग्नि है और पृथिवी रूप यज्ञकुण्ड के चारों ओर जल है।

पंजी०सं० आर.एन.आई.-२२४१/५७ -आर्यमित्र ०७ दिसम्बर, २०२३ पोस्टल रजि.जी.पी.ओ. लखनऊ/एन.पी.-१४/२०१६-२१ एक प्रति ₹ ५.००

आर्य मित्र

नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर./फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०९४१२६७८५७१, मंत्री-०९४१५३६५५७६, सम्पादक-९४५१८८१९७७
ई.मेल-apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,

.....

.....

.....

महर्षि दयानन्द और मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम

-डॉ.विवेक आर्य

राम और कृष्ण मानवीय संस्कृति के आदर्श पुरुष हैं। कुछ बंधुओं के मन में अभी भी यह धारणा है कि महर्षि दयानन्द और उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज राम और कृष्ण को मान्यता नहीं देता है। प्रत्येक आर्य अपनी दाहिनी भुजा ऊँची उठाकर साहसपूर्वक यह घोषणा करता है कि आर्यसमाज राम-कृष्ण को जितना जानता और मानता है, उतना संसार का कोई भी आस्तिक नहीं मानता। कुछ लोग जितना जानते हैं, उतना मानते नहीं और कुछ विवेकी-बंधु उन्हें भली प्रकार जानते भी हैं, उतना ही मानते हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम के संबंध में महर्षि दयानन्द ने लिखा है-

प्रश्न-रामेश्वर को रामचन्द्र ने स्थापित किया है। जो मूर्तिपूजा वेद-विरुद्ध होती तो रामचन्द्र मूर्ति स्थापना क्यों करते और वाल्मीकि जी रामायण में क्यों लिखते?

उत्तर- रामचन्द्र के समय में उस मन्दिर का नाम निशान भी न था किन्तु यह ठीक है कि दक्षिण देशस्थ 'राम' नामक राजा ने मंदिर बनवा, का नाम 'रामेश्वर' धर दिया है। जब रामचन्द्र सीताजी को ले हनुमान आदि के साथ लंका से चले, आकाश मार्ग में विमान पर बैठ अयोध्या को आते थे, तब सीताजी से कहा है कि-

अत्र पूर्वं महादेवः प्रसादमकरोद्विभुः। सेतु बंध इति विख्यातम्।।

वा० रा०, लंका काण्ड (देखिये- युद्ध काण्ड़, सर्ग १२३, श्लोक २०-२१)

'हे सीते! तेरे वियोग से हम व्याकुल होकर घूमते थे और इसी स्थान में चातुर्मास किया था और परमेश्वर की उपासना-ध्यान भी करते थे। वही जो सर्वत्र विभु (व्यापक) देवों का देव महादेव परमात्मा है, उसकी कृपा से हमको सब सामग्री यहाँ प्राप्त हुई। और देख! यह सेतु हमने बांधकर लंका में आ के, उस रावण को मार, तुझको ले आये।' इसके सिवाय वहाँ वाल्मीकि ने अन्य कुछ भी नहीं लिखा।

द्रष्टव्य- सत्यार्थ प्रकाश, एकादश समुल्लासः, पृष्ठ-३०३

इस प्रकार उक्त उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भगवान राम स्वयं परमात्मा के परमभक्त थे। उन्होंने ही यह सेतु बनवाया था। सेतु का परिमाप अर्थात् रामसेतु की लम्बाई- चौड़ाई को लेकर भारतीय धर्मशास्त्रों में दिए गए तथ्य इस प्रकार हैं-

दस योजनम् विस्तीर्णम् शतयोजन- मायतम्-वा०रा० २२/७६

अर्थात् राम-सेतु १०० योजन लम्बा और १० योजन चौड़ा था।

शास्त्रीय साक्ष्यों के अनुसार इस विस्तृत सेतु का निर्माण शिल्प कला विशेषज्ञ विश्वकर्मा के पुत्र नल ने पौष कृष्ण दशमी से चतुर्दशी तिथि तक मात्र पाँच दिन में किया था। सेतु समुद्र का भौगोलिक विस्तार भारत स्थित धनुष्कोटि से लंका स्थित सुमेरू पर्वत तक है। महाबलशाली सेतु निर्माताओं द्वारा विशाल शिलाओं और पर्वतों को उखाड़कर यांत्रिक वाहनों द्वारा समुद्र तट तक ले जाने का शास्त्रीय प्रमाण उपलब्ध है। भगवान श्रीराम ने प्रवर्षण गिरि (किष्किंद्या) से मार्गशीर्ष अष्टमी तिथि को उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र और अभिजीत मुहूर्त में लंका विजय के लिए प्रस्थान किया था।

महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रंथों में राम, कृष्ण, शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह तथा वीर बघेलों (गुजरात) का गर्वपूर्वक उल्लेख किया है। इस प्रकार महर्षि दयानन्द के राम राजपुत्र, पारिवारिक मर्यादाओं को मानने वाले, ऋषि मुनियों के भक्त, परम आस्तिक तथा विपत्तियों में भी न घबराने वाले महापुरुष थे। श्रीराम की मान्यता थी कि विपत्तियां वीरों पर ही आती हैं और वे उन पर विजय प्राप्त करते हैं। वीर पुरुष विपत्तियों पर विपत्तियों के समान टूट पड़ते हैं और विजयी होते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश का यह दुर्भाग्य रहा कि पाश्चात्य शिक्षा, सभ्यता और संस्कारों से प्रभावित कुछ भारतीय नेताओं ने पोरस के हाथियों के समान भारतीय मानक, इतिहास और महापुरुषों के सम्बन्ध में विवेकहीनता धारण कर भ्रमित विचार प्रकट करने प्रारम्भ कर दिये। साम्यवादी विचारद्वारा से प्रभावित व्यक्तियों के अनुसार और 'स्त्री एक सम्पत्ति है, इसमें आत्मतत्व विद्यमान नहीं है।' ऐसे अपरिपक्व मानसिकता वाले तत्व यदि राम के अस्तित्व और महिमा के संबंध में नकारात्मक विचार रखें, तो उनके मानसिक दिवालियापन की बात ही कही जाएगीं किन्तु भारत में जन्मे, यहां की माटी में लोट-पोट कर बड़े हुए तथा बार-एट ल, की प्रतिष्ठापूर्ण उपाधिधारी जब सन्तुष्टीकरण को आद्दार बनाकर 'राम' को मानने से ही इंकार कर दें, राम-रावण को मन के सतोगुण-तमोगुण का संघर्ष कहने लग जाएं तो हम किसे दोषी या अपराधी कहेंगे? अपनी समाधि पर 'हे राम!' लिखवाने वाले विश्ववंद्य गांधीजी ने राम के संबंध में 'हरिजन' के अंकों में लेख लिख कर कैसे विचार प्रकट किये, यह तो 'हरिजन' के पाठक ही जान सकते हैं। इस स्वतन्त्र राष्ट्रमें अपने आप्त महापुरुषों के अस्तित्त्व पर नकारात्मक दृष्टिकोण रखने वालों की बुद्धि पर दया ही आती है और कहना पड़ता है- धियो यो नः प्रचोदयात्। महर्षि दयानन्द ने राजा दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र राम के पौरुष तथा उनके गुणों का विचारणीय एवं महत्वपूर्ण वर्णन किया है। महर्षि दयानन्द ने राम को महामानव, ज्येष्ठ-श्रेष्ठ आत्मा, परमात्मा का परम भक्त, धीर-वीर पुरुष, विजय के पश्चात् भी विनम्रता आदि गुणों से विभूषित बताया है। महर्षि दयानन्द का राम एक ऐसा महानायक था, जिसने सद्गृहस्थ रहते हुए तपस्या द्वारा मोक्ष के मार्ग को अपनाया था। राम और कृष्ण दोनों ही सद्गृहस्थ तथा आदर्श महापुरुष थे। आज राष्ट्र को ऐसे ही आदर्श महापुरुषों की आवश्यकता है, जिनके आदर्श को आचरण में लाकर हम अपने राष्ट्र की स्वतन्त्रता, अखण्डता, सार्व भौमिकता तथा स्वायत्तता की रक्षा कर सकते हैं।

वैदिक मन से जीवन ज्योति जगाओ जी

आर्य कवि विजय प्रेमी

भाषण प्रवचन बहुत सुने अब कुछ करके दिखलाओ जी।
धर्म ध्यान के वैदिक मन से जीवन ज्योति जगाओ जी।।

श्वांसों का उपहार प्रभू से जो तुमने यह पाया है,
संकल्पों के साथ आत्मा का मंथन अपनाया है।
आर्य वर्त के सच्चे प्रहरी बन कर आगे आओ जी।
धर्म ध्यान के वैदिक पथ की जीवन ज्योति जगाओ जी।।

आर्य समाजी होने का अधिकार हृदय में जाग रहा
''जन गण मन'' परिवार तुम्हारा, तुमसे ही कुछ मांग रहा।
यज्ञ योग के निश्छल मन से, सेवा दीप जलाओ जी।
धर्म ध्यान के वैदिक मन की जीवन ज्योत जगाओ जी।।

राम कृष्ण का आंगन भारत, परम पुण्य का द्वारा है।
महापुरुषों का प्यार है इसमें, शिव का सजग दुलारा है।
ऋषि मुनियों की धरती का फिर, मिल कर कर्ज चुकाओ जी।
धर्म ध्यान के वैदिक मन की जीवन ज्योति जगाओ जी।।

सत्य शाश्वत कर्म तुम्हारे, कदम कदम पर दिखते हों।
तप के सन्यासी साधन भी,खुद में खरे उतरते हों।
ऋषिवर के दर्शन को अपने, मन में स्वयं बिठाओ जी।
धर्म ध्यान के वैदिक मन की जीवन ज्योति जगाओ जी।।

चलभाष-९८३७४१४३८५,

शोक सन्देश

आर्य समाज शास्त्री नगर, मेरठ के प्रधान श्री वीरेन्द्र कुमार आर्य का देहावसान दिनांक ३० नवम्बर, २०२३ को अकस्मात हो गया।

स्व. वीरेन्द्र कुमार आर्य की स्मृति में शान्ति यज्ञ एवं श्रद्धांजलि सभा का आयोजन आर्य समाज शास्त्री नगर डी-ब्लाक, मेरठ में किया गया। जिसमें जनपद की अनेक समाजों के आर्यजनों व सगे सम्बन्धियों ने श्रद्धांजलियाँ अर्पित की।

आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा एवं अन्य सभी पदाधिकारियों ने अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए दिवंगत आत्मा की सद्गति एवं परिजनों को यह असहनीय दुःख सहन करने की ईश्वर से प्रार्थना की है।

आर्य समाज लल्लापुर, वाराणसी का 87वाँ वार्षिकोत्सव

आर्य समाज लल्लापुर, वाराणसी का ८७वाँ वार्षिकोत्सव दिनांक १५ दिसम्बर से १७ दिसम्बर, २०२३ तक स्थान श्री पटेल स्मारक धर्मशाला तेलीयाबाग, वाराणसी में बड़े धूम-धाम से मनाया जायेगा।

समारोह में डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री, अमेठी, श्री महावीर मुमुक्ष जी-मुरादाबाद, प्राचार्या नन्दिता शास्त्री जी-वाराणसी, आचार्य ज्ञान प्रकाश वैदिक-बलिया, स्वामी राजेन्द्र योगी, मिर्जापुर, डॉ. प्रीति मिर्शिनी-वाराणसी, पं. वेदवीर शास्त्री-अररिया, पं. राम सेवक आर्य-हमीरपुर, श्री नन्दलाल आर्य, वाराणसी, श्री सोमेन्द्र आर्य-चन्दौली आदि वैदिक विद्वान व भजनोपदेशक पधार रहे हैं।

कार्यक्रम में प्रातः ५:०० बजे से ६:०० बजे तक संध्या हवन व प्रवचन आदि अपरान्ह १:०० बजे से ४:०० बजे तक विविध सम्मेलन होंगे। दिनांक १५ दिसम्बर, २०२३ को प्रातः ६:०० बजे नगर कीर्तन का आयोजन किया गया है।

सभी धर्म प्रेमी नर-नारियों से निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में पधार कर कार्यक्रम को सफल बनावें।

सम्पर्क सूत्र-९४१५२२३१३२, ९४५१११६६५६

शोक सन्देश

आर्य समाज भट्टीपुरा कालपी जनपद जालौन से अन्तरंग सदस्य श्री अखिल जैतली का देहान्त दिनांक ०४ नवम्बर, २०२३ को अकस्मात हो गया।

स्व. अखिल जैतली आर्य समाज के सक्रिय कार्यकर्ता व ऋषि सिद्धान्तों के प्रचारक थे। उनके निधन से आर्य समाज की अपूर्णनीय क्षति हुई हे, जिसकी पूर्ति असम्भव है।

आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के प्रधान व समस्त पदाधिकारीगण स्व. अखिल जैतली की मृत्यु पर अपनी शोक संवोदनायें व्यक्त करते हुए परिजनों को धैर्य प्रदान करने की ईश्वर से प्रार्थना करते हैं।

स्वामी-आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक-पंकज जायसवाल भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस,
5-मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है-सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।